राज्य प्रायोजित हिंसा से त्रस्त उत्तर प्रदेश की अवाम

उत्तर प्रदेश में मुसलमानों और विरोधियों के ऊपर पुलिसिया बर्बरता की रिपोर्ट

February 2020

कारवां-ए-मोहब्बत

राज्य प्रायोजित हिंसा से त्रस्त उत्तर प्रदेश की अवाम

उत्तर प्रदेश में मुसलमानों और विरोधियों के ऊपर पुलिसिया बर्बरता की रिपोर्ट

विषय सूचि

परिचय 3
आभार 5
19 और 20 दिसंबर का घटनाक्रम 6
ध्वस्त शासन तंत्र 9
नागरिकों को विरोध प्रदर्शन का है अधिकार 9
इंटरनेट शटडाउन और सीआरपीसी की धारा 144 का दुरुपयोग 9
समुदाय विशेष के नेताओं को बनाया गया निशाना 10
मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को बनाया गया निशाना 11
प्रदर्शनकारियों पर की गई हिंसक कार्रवा 13
हिंसक विरोध प्रदर्शन या उपद्रवियों ने की हिंसा? 13
पुलिस की गोलीबारी से हुई हिंसा में बढ़ोतरी 15
पुलिस ने किया अपशब्दों और गालियों का इस्तेमाल 18
बड़े पैमाने पर लोगों को किया गया नज़रबंद 19
संपत्ति को नुक़सान पहुंचाती पुलिस 20
नागरिकों के न्यायिक अधिकार के खिलाफ व्यवस्था के हथियार 23
अज्ञात लोगों पर एफआईआर 23
परिवार या समुदाय को डराना 23
जांच में कमियां 25
कस्टडी में यौन हिंसा और टॉर्चर 28
नाबालिगों के साथ बेरहम व्यवहार 32
बदले की भावना से भरा प्रशासन: उच्च पदाधिकारियों की भूमिका 35
चिकित्सा विभाग की नैतिकता का ख़ात्मा 36
आपात चिकित्सा से इनकार 36
अपनी ड्यूटी निभाने में फेल स्वास्थ्य कर्मी 37

परिजनों पर पड़ा प्रभाव 40
आजीविका और आर्थिक स्थिति पर प्रभाव 40
मानसिक स्थिति पर प्रभाव 40
वसूली का नोटिस 42
प्राकृतिक न्याय की अवहेलना 42
बदस्तूर जारी है हिंसा का पैटर्न 44
निष्कर्ष 45

परिचय

नागरिकता संशोधन क़ानून (सीएए), नेशनल रजिस्टर ऑफ इंडियन सिटिजन्स (एनआरआईसी) और नेशनल पॉपुलेशन रजिस्टर के ख़िलाफ़ देशभर में शांतिपूर्ण प्रदर्शन हो रहे हैं. लेकिन, उत्तर प्रदेश की सरकार इन प्रदर्शनों और विरोध की आवाज़ों को दबाने के लिए बर्बर कार्रवाई कर रही है. देश के हर हिस्से में लोग, खासकर महिलाएं सड़क पर उतर कर प्रदर्शन कर रही हैं, लेकिन सिर्फ यूपी (और बिहार के साथ तटीय कर्नाटक) के प्रदर्शनों ने ही हिंसक रुप लिया है. गौर करने की बात है कि इन तीनों राज्यों की सत्ता भारतीय जनता पार्टी के हाथों में है.

हिंसक विरोध-प्रदर्शनों को रोकने के लिए सरकार की कार्रवाई कोई बड़ी बात नहीं है. लेकिन, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री ने जिस तरह के बयान दिए वह बहुत ही अनर्गल और अनुचित है. देश की सबसे बड़ी आबादी वाले राज्य के मुख्यमंत्री अपनी जनता से "बदला" लेना की बात करते हैं. मुख्यमंत्री का भड़काऊ बयान सामने आने के बाद उत्तर प्रदेश पुलिस का बर्बर और अमानवीय चेहरा सामने आया है.

गृह मंत्रालय के प्रवक्ता ने 27 दिसंबर 2019 को बताया कि 19 दिसंबर 2019 तक उत्तर प्रदेश में CAA विरोधी प्रदर्शन की हिंसा में 19 लोग मारे जा चुके हैं. प्रदर्शन में संलिप्तता के आरोप में 1,113 और हिंसा की रोकथाम के लिए 5,558 अन्य लोगों को गिरफ़्तार किया गया है. 19 दिसंबर 2019 के बाद से ये आंकड़े लगातार बढ़ रहे हैं. इन सबके बीच मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने "बदला" लेने की बात कही और फिर पुलिस बे-लगाम होकर छापेमारी और उत्पीड़न का घिनौना खेल खेलने में लग गई. मुसलमानों को नोटिस भेजा गया कि प्रदर्शनों के दौरान हुए सार्वजनिक संपत्ति के नुक़सान (भले ही ये नुक़सान पुलिस द्वारा किए गए हों) की भरपाई करें. यहां नियमों को ताक पर रखा गया.

इधर यूपी पुलिस बर्बरता करने में लगी थी और उधर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ अपनी पीठ थपथपा रहे थे. मुख्यमंत्री ने एक ट्वीट किया, जिसमें उन्होंने लिखा, "हर दंगाई हतप्रभ है. हर उपद्रवी हैरान है. देख कर योगी सरकार की सख्ती मंसूबे सभी के शांत हैं."

लगातार इस तरह की घटनाएं सामने आने के बाद तथ्य जांच की कई टीमों ने उत्तर प्रदेश के मुस्लिम परिवारों का दौरा किया. सभी ने पाया कि नफ़रत से भरी वर्दीधारी पुलिस ने मुसलमानों के घरों में घुसकर मारा. उनके स्कूटर-कारों में आग लगा दिए गए, टीवी, वाशिंग मशीन जैसे उपकरणों को पूरी तरह क्षतिग्रस्त किया गया और कैश-गहने आदि लूट लिए गए. बच्चों के ख़िलौने तक को पुलिस ने नहीं बख़्शा. घरों के दरवाजे तोड़े गए. पुलिस को रोकने की कोशिश करने पर घर के बुजुर्गों, महिलाओं और यहां तक कि मासूम बच्चों पर भी पुलिस ने लाठियां बरसाईं. मुसलमानों के ख़िलाफ़ पुलिस ने भद्दी और अपमानजनक टिप्पणियां की.

मुस्लिम बहुल शहरों में पुलिस ने हजारों "अज्ञात" लोगों पर मुक़दमा दर्ज किया. इस मुक़दमे का इस्तेमाल पुलिस उन लोगों को डराने के लिए कर

रही है जो पुलिस-प्रशासन की ज्यादती पर बोलना चाहते हैं. लोगों को पुलिस अपनी मर्जी से गिरफ़्तार कर रही है. कैमरे के सामने कुछ भी बोलने से लोग डर रहे हैं. अगर एकाध लोग कैमरे के सामने आते भी हैं तो अपना चेहरा ढक लेते हैं. उत्तर प्रदेश के शहरी हिस्सों में मुसलमान बुरी तरह आतंकित हैं. पुरुषों को डर है कि उनके ऊपर पुलिस गंभीर मुक़दमे लाद देगी तो महिलाएं इस बात से सहम जाती हैं कि उनके घरों को भी लूट लिया जाएगा.

उत्तर प्रदेश में पुलिस की बर्बर हिंसा मामले पर 16 जनवरी 2020 को जन-सुनवाई की गई. इस जन-सुनवाई के दौरान पुलिस की बर्बरता के शिकार लोगों, कई सामाजिक कार्यकर्ताओं (जो पुलिस की हिंसा के चश्मदीद रहे हैं या जिन्होंने पीड़ित परिवारों से मुलाकात की है) और विशेषज्ञों के अनुभवों को सबूत के तौर पर पेश किया गया. सुनवाई के दौरान बेगुनाह लोगों और मासूमों पर पुलिस की कार्रवाई का वीडियो सबूत पेश किया गया. हिंसा भड़काने में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ और उनकी पार्टी के बड़े नेताओं की भूमिका और पीड़ितों के ईलाज में डॉक्टरों की लापरवाही को भी सामने रखा गया.

उत्तर प्रदेश में पुलिस की बर्बर हिंसा मामले पर 16 जनवरी 2020 को नई दिल्ली में जन-सुनवाई (पीपुल्स ट्राइब्यूनल) का आयोजन हुआ. इस जन-सुनवाई के दौरान पुलिस की बर्बरता के शिकार लोगों, कई सामाजिक कार्यकर्ताओं (जो पुलिस की हिंसा के चश्मदीद रहे हैं या जिन्होंने पीड़ित परिवारों से मुलाकात की है) और विशेषज्ञों के अनुभवों को सबूत के तौर पर पेश किया गया. सुनवाई के दौरान बेगुनाह लोगों और मासूमों पर पुलिस की कार्रवाई का वीडियो सबूत पेश किया गया. हिंसा भड़काने में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ और उनकी पार्टी के बड़े नेताओं की भूमिका और पीड़ितों के ईलाज में डॉक्टरों की लापरवाही को भी सामने रखा गया.

इस रिपोर्ट के जरिए हमने कोशिश की है कि जन-सुनवाई की जूरी के फ़ैसले के साथ-साथ पुलिस की हिंसा का तस्वीर पेश करने वाली मीडिया रिपोर्टों और तथ्य जांच टीम की रिपोर्टों को भी आपके सामने प्रस्तुत किया जाए. उत्तर प्रदेश की स्थिति देखकर लगता है कि वहां सरकार ने अपनी ही जनता के ख़िलाफ़ जंग छेड़ दिया है.

इस रिपोर्ट में कई पीड़तों-गवाहों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए हमने उनकी पहचान को गुप्त रखा है.

हर्ष मंदर और नवशरण सिंह

आभार

इस रिपोर्ट को तैयार करने के लिए हम मिहिका चांचनी और वर्णा बालाकृष्णन का धन्यवाद करते हैं. मूलत: अंग्रेजी में तैयार इस रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद करने के लिए कारवां मीडिया टीम के अभिनव प्रकाश और फ्रीलांसर के तौर पर जुड़े शुभम सिंह ठाकुर और आरती प्रजापति के प्रति हम विशेष आभारी हैं. कारवां-ए-मोहब्बत की पूरी टीम की मेहनत से ही यह रिपोर्ट तैयार हो सका है.

तनिका सरकार, आयशा किदवई, निवेदिता मेनन, फरीदा खान, सुरभि चोपड़ा, कविता कृष्णन, जॉन दयाल, दिनेश ओबरॉय, सुबीर बनर्जी, नवशरण सिंह, नताशा बधवार, साजिद अली और अधिवक्ता अकरम अख़्तर चौधरी जैसे तमाम सहयोगी हमारे तथ्य जांच टीम (फैक्ट फाइंडिंग टीम) का हिस्सा रहे हैं. हम उन सभी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं. तथ्य जांच टीम का सहयोग करने के लिए हम वर्णा बालाकृष्णन, सैयद मोहम्मद जहीर, अदिति सारस्वत, अंकिता रामगोपाल, सुमित कुमार गुप्ता, आदिल अमान, स्वाति सिंह, नसीमा ख़ातून, नियति शर्मा, सुरूर मंदर, मीरा विश्वनाथन, शिवांगी अय्यर, संदीप यादव, जेन्नी सलफ़त, अनिर्बान भट्टाचार्य, नवीद भुख्तियार और उस्मान जावेद के प्रति हम विशेष आभार प्रकट करते हैं.

उत्तर प्रदेश में पुलिसिया कार्रवाई पर जन-सुनवाई को मूर्त रूप देने में ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक वीमेन्स एशोसियशन (AIDWA), अनहद, कन्स्टीट्यूशनल कंडक्ट ग्रुप (CCG), दी कैंपेन फॉर ज्यूडिशियल अकाउंटिबिलिटी एंड रिफॉर्म (CJAR), दिल्ली साइंस फोरम, कारवां-ए-मोहब्बत, मजदूर किसान शक्ति संगठन (MKSS), नेशनल अलायंस ऑफ पीपुल्स मूवमेंट्स (NAPM), नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वीमेन (NFIW), नॉट इन माय नेम कैंपेन और सतर्क नागरिक संगठन (SNS) जैसे संगठनों का सबसे महत्वपूर्ण योगदान रहा है.

जन-सुनवाई के दौरान कई गवाहों/ प्रत्यक्षदर्शियों ने उत्तर प्रदेश की प्रामाणिक और असल तस्वीर पेश की. इन गवाहियों ने इस रिपोर्ट को तथ्यपरक बनाया है. इसके लिए हम सुभाषिनी अली, दिनेश ओबरॉय, राहुल रॉय, नवशरण सिंह, एस आर दारापुरी, निवेदिता मेनन, फ़रीदा ख़ान, सदफ़ जफ़र, दीपक कबीर, संदीप पाण्डेय, अकरम अख़्तर चौधरी, मोहम्मद शरीफ़, अली जैदी, मैत्रेयी गुप्ता, सबा, अरुंधति धुरु, मोहम्मद सुलेमान, अभीर पालट, शहबा फारूकी, लीना मेंघाने, डॉ मैथ्यू वर्गीज़, हर्ष मंदर, गुफ़रान आलम, राजीव यादव, आयशा किदवई, सुरूर मंदर, वृंदा ग्रोवर, अनिर्बान भट्टाचार्य, सरीम नवेद, जॉन दयाल, मनोज सिंह , प्रशांत भूषण, तनिका सरकार और मेधा पाटकर के प्रति कृतज्ञ हैं.

इस जन-सुनवाई में शामिल जूरी के सम्मानित सदस्यों के प्रति हम आभार प्रकट करते हैं. इन्होंने सुनवाई की पूरी प्रक्रिया में हमारा मार्गदर्शन किया. जूरी में सम्मानित जस्टिस बी सुदर्शन रेड्डी, जस्टिस वी गोपाल गौड़ा, जस्टिस एपी शाह, डॉ. शांता सिन्हा, प्रो. इरफान हबीब, श्री देब मुखर्जी, श्री चमन लाल, डॉ. अनीरुद्ध काला, डॉ. एनसी सक्सेना शामिल रहे.

19 और 20 दिसंबर का घटनाक्रम

कारवां ए मोहब्बत की तथ्य जांच टीम ने 28 दिसंबर से 12 जनवरी के बीच मेरठ, मुजफ्फरनगर, फिरोजाबाद और संभल जिले का दौरा किया. इस दौरान हमने लखनऊ, कानपुर, वाराणसी और मऊ के लोगों से भी बातचीत की. इस बातचीत और अन्य तथ्य जांच टीम की रिपोर्ट्स के आधार पर कहा जा सकता है कि ये सभी विरोध प्रदर्शन एक सामान्य पैटर्न पर चल रहे हैं.

संसद में नागरिकता संशोधन कानून 11 दिसंबर 2019 को पारित किया गया था. इसके ठीक बाद ही इस कानून के खिलाफ अपनी असहमति दर्ज कराने के लिए लोगों ने अपने घरों से निकलना शुरू कर दिया. आने वाले एक सप्ताह के भीतर ही ये लोग प्रदेश के मुख्य शहरों और कस्बों में जुटने लगे. 20 दिसंबर, शुक्रवार यानी जुमे का दिन था, लिहाज़ा इस दिन नमाज अदा करने के लिए मस्जिदों में बड़ी संख्या में मुसलमान पुरुषों का जमावड़ा हुआ. नमाज के बाद इन्होंने प्रदर्शन भी किया. ये सभी विरोध प्रदर्शन स्थानीय सुरक्षा बलों और अन्य नागरिक सुरक्षा समूहों जैसे रैपिड एक्शन फोर्स (आरएएफ) की तैनाती के बीच हो रहे थे. इसके बावजूद 19 व 20 दिसंबर को इन प्रदर्शनों के दौरान हालात तनावपूर्ण हो गए.

इस दौरान कुछ शहरों में इस कानून के खिलाफ सिविल सोसाइटियों और राजनीतिक दलों ने विरोध प्रदर्शन का आह्वान भी किया. प्रशासन ने इन प्रदर्शनों को रोकने के लिए अलग - अलग तरह के हथकंडे अपनाए. जानकारी के अनुसार संभल में, 19 दिसंबर के दिन दो अलग - अलग विरोध प्रदर्शनों की योजना बनाई गई थी। इनमें एक योजना समाजवादी पार्टी के स्थानीय विधायक और सांसद ने मिलकर बनाई थी, वहीं दूसरी योजना जिला संघर्ष समिति (जेडएसएस) द्वारा बनाई गई थी। जेडएसएस स्थानीय स्तर पर काम करने वाली एक सिविल सोसायटी संगठन (सीएसओ) है. इस संगठन के ज्यादातर लोग मुसलमान हैं.

बताया जाता है कि प्रशासन ने जेडएसएस से प्रदर्शन की अनुमति वापस ले ली और प्रदर्शन वाले इलाके में धारा 144 लागू कर दी गई. इसके साथ ही जेडएसएस के नेताओं को प्रदर्शन में अनुपस्थित रहने के लिए भी कहा गया व इसकी गारंटी के तौर पर उन्हें एक कागज पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया.

हालांकि समाजवादी पार्टी के नेताओं व प्रदर्शनकारियों ने बनाई गई योजना के अनुसार ही अपना विरोध प्रदर्शन किया. लेकिन उन्हें भी शहर के चंदौसी चौक पर पुलिस की बर्बरता का सामना करना पड़ा. अखबारों में छपी रिपोर्ट्स के अनुसार इन प्रदर्शनकारियों पर ना सिर्फ लाठीचार्ज किया गया बल्कि आंसू गैस के गोले भी छोड़े गए. इसके साथ ही पुलिस ने हवाई फायरिंग भी की. खबरों के मुताबिक प्रदर्शनकारियों ने भी पुलिस पर पथराव किया व दो बसों पर पथराव कर उन्हें नुकसान पहुंचाया.

20 दिसंबर यानी शुक्रवार को जुमे की नमाज के बाद ये प्रदर्शनकारी संगठित तौर पर सामने आए. मुजफ्फरनगर में एक चश्मदीद ने बताया, "किसी को भी उम्मीद नहीं थी कि लोग इतनी

बड़ी संख्या में बाहर आएंगे. प्रदर्शनकारियों की संख्या लगभग पाँच हज़ार थी. इसके लिए उन्हें किसी संगठन ने आह्वान नहीं किया था और ना ही इन प्रदर्शनकारियों का कोई नेता था. यह बिल्कुल सहज था.” इन प्रदर्शनकारियों के पास तख्तियां या झंडे नहीं थे. मुजफ्फरनगर के अलावा कमोबेश ऐसा ही संभल, मेरठ और फिरोजाबाद जैसे शहरों में भी हुआ. स्थानीय नेताओं के अनुसार मुस्लिम समुदाय के लोगों में डर का माहौल था, जिसके चलते अकेले या कम संख्या में प्रदर्शन करने के बजाय उन्होंने 20 दिसंबर को एकजूट होकर शांतिपूर्ण ढंग से विरोध प्रदर्शन करने का फैसला किया था.

इन सभी शहरों में प्रदर्शनकारी शहर के अलग-अलग जगहों पर इकट्ठे हुए थे व उन्होंने शहर के केंद्र तक मार्च करने की योजना बनाई थी. सभी शहरों में पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर बड़ी बेरहमी से बल प्रयोग किया. यहां लोगों ने बताया कि विरोध प्रदर्शन शुरू में शांतिपूर्ण था. मुजफ्फरनगर में भी यह प्रदर्शन पहले शांतिपूर्ण था. बाद में इस प्रदर्शन में क्षेत्र के सांसद संजीव बालियान अपने सैकड़ों समर्थकों व निजी सुरक्षाकर्मियों के साथ शामिल हुए फिर हालात बिगड़ गए. जानकारी के अनुसार संजीव बालियान ने प्रदर्शनकारियों के खिलाफ सख्त हिंसक कार्रवाई करने के लिए पुलिस प्रशासन पर दबाव भी बनाया. जिसके बाद पुलिस और आरएएफ ने लाठीचार्ज शुरू किया व आंसू गैस के गोले भी दागे. जानकारी के मुताबिक जब पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर बल प्रयोग किया तब उनके साथ कुछ गैर प्रशासनिक लोग भी शामिल थे. ठीक इसी समय पथराव, आगजनी जैसी हिंसक घटनाएं हुई. सार्वजनिक संपत्तियों को नुकसान पहुंचाया गया. हालांकि इन हिंसक घटनाओं में कौन लोग शामिल थे यह अब तक स्पष्ट नहीं हो सका है.

इसी तरह मेरठ का विरोध प्रदर्शन भी दोपहर तीन बजे तक शांतिपूर्ण ढ़ंग से चल रहा था. स्थानीय नेताओं के अनुसार, इसी समय भूमियापुल की दिशा से लगभग 20-25 पुरुष आए और फिर उन्होंने हंगामा कर दिया. हंगामे के बाद इस इलाके के तिराहे पर तैनात पुलिसकर्मियों ने जवाबी कार्रवाई करते हुए लाठीचार्ज किया. नतीजतन, भीड़ तितर-बितर हो गई. इस दौरान कुछ लोगों ने पथराव भी किया. पुलिस ने यहां भी प्रदर्शनकारियों पर आंसू गैस के गोले दागे और इसके साथ ही रबर बुलेट भी चलाए गए. लगभग 6:00 - 6:30 बजे हापुड़ रोड पर इस्लामाबाद पुलिस चौकी में आग लगा दी गई. इन घटनाओं को देखकर लगता है कि ऐसा इसलिए किया गया ताकि पुलिसिया कार्रवाई को सही ठहराया जा सके.

यहां 20 दिसंबर को दो प्रमुख जगहों में बड़े पैमाने पर हिंसा हुई. पहली जगह हापुड़ रोड है जो कि एक व्यस्त सड़क है. यह सड़क शहर के केंद्र से होकर गुजरती है. यहां इस्लामाबाद पुलिस चौकी और सिटी हॉस्पिटल स्थित है. दूसरी जगह तारापुरी और अहमदनगर का मुस्लिम बहुल इलाका है. जानकारी के अनुसार तारापुरी में पुलिस ने लोगों का पीछा किया और उन्हें गोली मारी.

संभल में चंदौसी चौक पर भी प्रदर्शनकारियों ने जुलूस निकाला. इसी दौरान एसपी सिटी के नेतृत्व में भारी पुलिस बल ने प्रदर्शनकारियों पर लाठीचार्ज करना शुरू कर दिया. प्रदर्शनकारियों पर आंसू गैस के गोले भी दागे गए. इससे वहां भगदड़ मच गई.

इसी तरह फिरोजाबाद में भी ऐसा ही कुछ हुआ. स्थानीय लोगों ने हमें बताया कि यहां पुलिस सादे कपड़ों में प्रदर्शनकारियों के साथ थी. उन्होंने नकाब के जरिए अपने चेहरे को ढ़ंक रखे थे. इसके साथ ही एक स्थानीय व्यक्ति ने हमें यह भी बताया कि इन नकाबपोशों ने प्रदर्शनकारियों को गालियां देकर व पथराव करके उकसाने का काम किया. स्थानीय लोग इस बात पर भी सहमत हैं कि कुछ प्रदर्शनकारियों ने पथराव के साथ हिंसक आंदोलन किया. प्रत्यक्षदर्शियों का दावा है कि पुलिस ने इस दौरान गोलीबारी भी की. ज्यादातर गोलियां लोगों के कमर के ऊपर दागी गई. जिसके कारण इस घटना में छह लोगों की मौत हो गई.

मुजफ्फरनगर में गोलीबारी की कोई घटना नहीं हुई लेकिन यहां जो हुआ वह भी दिल दहला देने वाला था. जानकारी के मुताबिक यहां पुलिसकर्मी, आर.ए.एफ और गैर-वर्दीधारी लोग, लगभग 50 से 100 की संख्या में दो मुस्लिम बहुल इलाकों में घुस गए. रात करीब 10.30 बजे यहां की सभी स्ट्रीट लाइटों को बंद कर दिया गया. इसके बाद ये पुलिसकर्मी मस्जिदों, घरों व दुकानों में घुस गए. उन्होंने मस्जिदों में घुसकर वहां लगे शीशों को तोड़ दिया. इसके साथ ही उन्होंने तोड़फोड़ करते हुए अपने रास्ते में आने वाली हर चीज को नष्ट कर दिया. वे घरों के अंदर भी घुसे. वहां वाशिंग मशीन, फ्रिज, फर्नीचर, बर्तन, धूपदान, अलमारी और रसोईघर के कीमती सामानों को तोड़ दिया गया.

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि पुलिस ने विरोध प्रदर्शनों को रोकने के लिए व्यवस्थित और योजनाबद्ध तरीके से प्रयास किया. इसके बावजूद भी जब विरोध प्रदर्शन नहीं रुके तब उन्होंने इसे नियंत्रित करने के लिए हिंसक साधनों का इस्तेमाल किया व आपातकालीन चिकित्सा और कानूनी सेवाओं को निलंबित भी कर दिया गया.

इसके बाद पुलिस ने नाबालिगों समेत कई लोगों को गिरफ्तार किया. गिरफ्तार लोगों को गैरकानूनी तरीके से हिरासत में रखा गया और उन्हें यातनाएं दी गईं. इन सब के दौरान कानूनी प्रक्रियाओं और घायल लोगों के उपचार संबंधी नियमों की भी अवहेलना की गई. बताया जाता है कि पीड़ित लोगों की मांग के बावजूद एफआईआर दर्ज नहीं किए गए. पोस्टमार्टम रिपोर्ट (पीएमआर) और मेडिको-लीगल सर्टिफिकेट (एमएलसी) देने से भी इनकार कर दिया गया.

पुलिस प्रशासन ने बड़े पैमाने पर फर्जी एफआईआर दर्ज किये और इस तरह एक समुदाय विशेष को निशाना बनाने का प्रयास किया गया. इस प्रयास में उन्होंने कानूनी ताकतों को हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया. लोगों को घरों और सड़कों से उठा लिया गया. उनपर सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने का आरोप लगाकर वसूली भी किया गया.

राज्य के नागरिकों की सुरक्षा करना किसी भी राज्य सरकार का कर्तव्य होता है. लेकिन इन सभी घटनाओं से पता चलता है कि राज्य सरकार अपने कर्तव्य निर्वहन में पूरी तरह से विफल रही. इसके विपरीत सरकार ही राज्य की जनता के लिए एक तरह का खतरा बन गई.

ध्वस्त शासन तंत्र

नागरिकों को विरोध प्रदर्शन का है अधिकार

इंटरनेट शटडाउन और सीआरपीसी की धारा 144 का दुरुपयोग

किसी भी लोकतंत्र में वहां के नागरिकों को शांतिपूर्ण तरीके से सरकार के खिलाफ अपनी असहमति जताने का अधिकार होता है. भारत में राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक असंतोष को व्यक्त करने की लंबी परंपरा रही है. लेकिन साल 2014 में केंद्र में भारतीय जनता पार्टी की सरकार आने के बाद होने वाले विरोध प्रदर्शनों और असहमतियों को सरकार ने निर्मम तरीके से कुचलने का काम किया है. इसके लिए सरकार ने मुख्य रूप से दो तरीके अपनाए. पहला, सीआरपीसी की धारा 144 का बड़े पैमाने पर दुरुपयोग किया गया. और दूसरा, लोगों के विरोध प्रदर्शनों को दबाने के लिए विभिन्न इलाकों में इंटरनेट शटडाउन किया गया. उत्तरप्रदेश की हाल की घटनाओं में भी विरोध प्रदर्शनों को कुचलने के लिए ये दोनों ही तरीके अपनाए गए.

ब्रिटिश काल में सीआरपीसी की धारा 144 का मकसद सार्वजनिक व्यवस्था का उल्लंघन करना व सरकार के खिलाफ आयोजित बड़ी सभाओं को गैरकानूनी बताकर हिंसा फैलाना था. सुप्रीम कोर्ट ने भी धारा 144 से संबंधित कई ऐसे फैसले दिए हैं जहां इसकी शक्तियों को सीमित करने की बात कही गई है. सुप्रीम कोर्ट ने इस विषय में कहा है कि हिंसा या दंगों को रोकने के लिए राज्य कार्रवाई कर सकता है लेकिन वह केवल इसकी आशंका के आधार पर ऐसा नहीं कर सकता. राज्य की जिम्मेदारी होती है कि वह प्रदर्शनकारियों को पर्याप्त सुरक्षा मुहैया कराए ताकि विरोध प्रदर्शनों को अहिंसक तरीके से आगे बढ़ने दिया जा सके.

उत्तरप्रदेश में सीएए/एनआरसी के खिलाफ बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन होने वाले थे. लेकिन इसके एक दिन पहले ही सरकार ने राज्य भर में धारा 144 लागू कर दी. इस कानून के लागू होने के बाद शांतिपूर्वक विरोध प्रदर्शन करना भी अवैध हो गया. इसके अलावा राज्य सरकार ने सीआरपीसी की धारा 149 के तहत होने वाली अपराधों को रोकने के मकसद से 3000 लोगों को नोटिस भी जारी किया. 19 दिसंबर 2019 को एक संवाददाता सम्मेलन में उत्तर प्रदेश पुलिस के महानिदेशक श्री ओपी सिंह ने बताया कि मऊ, वाराणसी, अलीगढ़, प्रयागराज और लखनऊ में गिरफ्तारियां की गई हैं, और कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए 3,000 से अधिक लोगों को नोटिस जारी किया गया है. इसके साथ ही उन्होंने आगे कहा, "हम सोशल मीडिया पर निगरानी कर रहे हैं, हमने कुछ गिरफ्तारियां की हैं और कुछ लोगों को निगरानी में रखा है. मैं सभी से अपील करता हूं कि सोशल मीडिया का उपयोग करके फर्जी समाचार और अफवाहें न फैलाएं."

बाद के दिनों में यूपी पुलिस ने बड़े पैमाने पर शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों के साथ क्रूर हिंसा की

और उनके मौलिक अधिकारों का हनन भी किया. इसके पीछे तर्क दिया गया कि धारा 144 लागू होने के दौरान किसी भी तरह का विरोध प्रदर्शन करना गैरकानूनी है. इस तरह यह स्पष्ट है कि उत्तरप्रदेश में जब हजारों की संख्या में लोग अपना विरोध दर्ज कराने के लिए सड़कों पर आने वाले थे उसके ठीक एक दिन पहले ही धारा 144 लागू कर दी गई. जबकि उस समय तक इन प्रदर्शनों के हिंसक हो जाने के कोई संकेत नहीं थे. ऐसा इसलिए किया गया ताकि इन शांतिपूर्ण प्रदर्शनों को भी गैर कानूनी ठहराया जा सके.

मोहम्मद सुलेमान ने हमें बताया कि सीएए पास होने के बाद 13 दिसंबर से कानपुर समेत राज्य के अन्य हिस्सों में भी हजारों लोग अपना विरोध दर्ज कराने के लिए घरों से बाहर निकले. प्रदर्शन के बाद वे शांतिपूर्ण तरीके से लौट गए. इस दौरान किसी भी तरह की हिंसा नहीं हुई.

20 दिसंबर 2019 को हापुड़, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, शामली, लखनऊ, प्रयागराज, उन्नाव, आगरा, सुल्तानपुर, मऊ, बागपत, मेरठ, बुलंदशहर, आजमगढ़, सहित यूपी के कम से कम 18 जिलों में इंटरनेट सेवाएं निलंबित कर दी गईं. ऐसा इसलिए किया गया ताकि लोगों को विरोध प्रदर्शन संबंधी सूचनाएं ना मिले और वे सभा आयोजित ना कर सकें.

गौतम भाटिया जो कि दिल्ली के एक वकील हैं कहतें हैं कि आज हम एक ऐसे युग में हैं जहां इंटरनेट लोगों के जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गया है. इंटरनेट शटडाउन से लोगों को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है. लेकिन यहां ध्यान देने वाली बात यह भी है कि एक शोध के अनुसार इंटरनेट शटडाउन और हिंसा का कोई संबंध नहीं है. यानी इंटरनेट शटडाउन के जरिए हिंसा को नहीं रोका जा सकता.

इंटरनेट के बंद होने से लोगों को दैनिक जीवन में कई तरह की समस्याएं आती हैं. इसकी वजह से एटीएम, डिजिटल बैंकिग लेनदेन, इलेक्ट्रॉनिक केवाईसी सहित ओटीपी-संबंधित सेवाओं के उपयोग में भी व्यवधान आता है. इस तरह राज्य की इस कार्रवाई का खामियाजा राज्य के लाखों निवासियों को भुगतना पड़ा. इनमें ऐसे लोग भी शामिल हैं जो इस विरोध प्रदर्शन का हिस्सा नहीं थे.

यह हमारे लिए शर्म की बात है कि भारत इंटरनेट शटडाउन के मामले में पूरी दुनिया का नेतृत्व करता है. भारत इस मामले में चीन, पाकिस्तान, ईरान, चाड और मिस्र जैसे देशों से भी आगे है. एक मानवाधिकार कार्यकर्ता अभिरर पालत वाराणसी के अपने अनुभवों के आधार पर कहते हैं, "हम जो देख रहे हैं वह एक बहुत ही पक्षपाती प्रशासन है जो सरकार की किसी भी तरह की आलोचना को बर्दाश्त नहीं करता है."

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धारा 144 लागू करने और इंटरनेट को बंद करने का मकसद लोगों को संगठित होने और विरोध करने के अपने अधिकार का प्रयोग करने से रोकना था.

समुदाय विशेष के नेताओं को बनाया गया निशाना

उत्तरप्रदेश पुलिस ने समुदाय के नेताओं को निशाना बनाने का काम किया. सामुदायिक नेता नागरिकों और विरोध प्रदर्शनों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करते हैं. वे प्रासंगिक मुद्दों के बारे में लोगों को सूचित करने का काम करते हैं, लोगों को ऐसे मुद्दों के प्रति

जागरूक करते हैं, जिसका सीधा प्रभाव उनके जीवन पर पड़ता है. इसके साथ ही वे बुरी परिस्थितियों में समुदाय के लोगों के साथ खड़े भी होते हैं. इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि पुलिस ने समुदाय के नेताओं को ही निशाना बनाया.

जिला संघर्ष समिति (जेडएसएस) स्थानीय स्तर पर काम करने वाली एक सिविल सोसायटी संगठन (सीएसओ) है. इस संगठन के ज्यादातर लोग मुसलमान हैं. यह संगठन साल 2011 से संभल में शिक्षा, वित्त और नगरपालिक गतिविधियों जैसे विभिन्न सामुदायिक पहलुओं पर काम कर रहा है. इसके साथ ही यह संगठन हाल की घटनाओं के बीच भी मध्यस्थता के तौर पर सक्रिय भूमिका निभा रहा है. तथ्य जांच टीम के मुताबिक इस संगठन की स्थानीय मुस्लिम समुदाय में भी काफी महत्वपूर्ण भूमिका रही है. 19 दिसंबर के दिन दो अलग-अलग विरोध प्रदर्शनों की योजना बनाई गई थी. इनमें एक योजना समाजवादी पार्टी के स्थानीय विधायक और सांसद ने मिलकर बनाई थी, वहीं दूसरी योजना जेडएसएस द्वारा बनाई गई थी. बताया जाता है कि प्रशासन ने जेडएसएस से प्रदर्शन की अनुमति वापस ले ली और प्रदर्शन वाले इलाके में धारा 144 लागू कर दी गई. इसके साथ ही जेडएसएस के नेताओं को प्रदर्शन में अनुपस्थित रहने के लिए भी कहा गया व इसकी गारंटी के तौर पर उन्हें एक कागज पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया.

जानकारी के अनुसार जिस दिन विरोध प्रदर्शन की योजना बनाई गई थी, उसके ठीक पहले ही जेडएसएस के कई मुस्लिम नेताओं को उनके घरों में नजरबंद कर दिया गया. इन नेताओं को इस बात की आशंका थी कि यदि वे घर से बाहर निकलते हैं तो उन्हें हिंसा भड़काने और प्रदर्शनकारियों को उकसाने के आरोप में गिरफ्तार किया जा सकता है. शाम तकरीबन 4 बजे एक मुस्लिम नेता को, जिसे घर में नजरबंद किया गया था सूचना मिली कि उसका भाई दल्ली में किसी अस्पताल में भर्ती है. इसके बाद वह तुरंत दिल्ली चला गया. उसके जाने के बाद उस पर और पांच अन्य जेडएसएस के कार्यकर्ताओं पर हिंसा भड़काने का आरोप लगा दिया गया. जबकि हिंसा के वक्त इनमें से कोई भी हिंसा स्थल पर मौजूद नहीं था. घटना स्थल पर लगे सीसीटीवी कैमरे के जरिए भी इसकी जांच की जा सकती है.

फैक्ट फाइंडिंग टीम के अनुसार मुजफ्फरनगर में भी स्थानीय नेताओं को इसी तरह डराया-धमकाया गया. समाजवादी पार्टी के स्थानीय पदाधिकारियों से बातचीत में पता चला कि सपा के वार्ड नेता जो मुस्लिम थे, उन्हें पुलिस से एक पत्र मिला था. इस पत्र में लिखा था कि यदि उनके इलाके में लोग किसी भी तरह का विरोध प्रदर्शन करते हैं तो इसके लिए वे व्यक्तिगत तौर पर जिम्मेदार होंगे.

मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को बनाया गया निशाना

सीएए के विरोध में लखनऊ में हुई हिंसा के दौरान गिरफ्तार किए गए रिटायर्ड आईपीएस अधिकारी एस आर दारापुरी जो कि मानवाधिकार कार्यकर्ता भी हैं, कहते हैं, *"मैंने हमेशा ही मानवाधिकारों के पक्ष में अपनी बात रखी है और पुलिस द्वारा किए गए फर्जी एनकाउंटरों का खुलकर विरोध किया है. इसके साथ ही मैं राज्य द्वारा की जाने वाली*

हिंसा का भी विरोध करता रहा हूं. मुझे लगता है कि यही वो वजह है जिसके कारण यूपी पुलिस ने मुझे व्यक्तिगत तौर पर निशाना बनाया है."

इसी तरह अन्याय के खिलाफ खड़े होने वाले ऐसे वकीलों, कार्यकर्ताओं, पत्रकारों और अन्य मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को भी राज्य सरकार द्वारा शहरी नक्सली और आतंकवादी कहकर परेशान किया जा रहा है.

76 साल के मोहम्मद शोएब जो कि एक प्रसिद्ध वकील और मानवाधिकार कार्यकर्ता हैं उन्हें पहले तो घर में नजरबंद रखा गया, फिर बाद में यूपी पुलिस ने उन्हें हिरासत में ले लिया. इसी तरह अखबार द हिंदू के पत्रकार उमर राशिद और रिहाई मंच से जुड़े रॉबिन वर्मा को भी यूपी पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया.

नकारी के अनुसार उमर राशिद, रॉबिन वर्मा और दो अन्य पत्रकार उत्तरप्रदेश भाजपा कार्यालय के बाहर एक ढ़ाबे में बैठे हुए थे. वे भाजपा कार्यालय में थोड़ी देर में शुरू होने वाली एक प्रेस कॉन्फ्रेंस का इंतजार कर रहे थे. इसी समय उन्हें उठा लिया गया. इसके बाद उन्हें वहां से एक किमी की दूरी पर स्थित हजरतगंज पुलिस स्टेशन ले जाया गया. बताया जाता है कि इसके बाद पुलिस ने वहां रॉबिन को चमड़े की बेल्ट से पीटा और थप्पड़ भी मारे. कुछ घंटों बाद ही उमर राशिद को रिहा कर दिया गया लेकिन रॉबिन वर्मा को गिरफ्तारी के लगभग एक महीने बाद 14 जनवरी को जमानत पर रिहा किया गया. रॉबिन वर्मा पर उन्हीं धाराओं के तहत आरोप लगाए गए थे, जिनका इस्तेमाल वकील शोएब के खिलाफ किया गया था.

मानवाधिकार कार्यकर्ता एस आर दारापुरी बताते हैं कि 19 दिसंबर को सुबह 7 बजे से ही उनके घर के बाहर पुलिस तैनात थी. उन्हें उस दिन शाम तक नजरबंद रखा गया. घर में गिरफ्तारी के दौरान उन्होंने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म फेसबुक पर एक तस्वीर भी पोस्ट की. इस तस्वीर में वे अपने घर के सामने एक पोस्टर लेकर खड़े हुए हैं. पोस्टर में "नागरिकता बचाओ" का संदेश लिखा हुआ है. इसके साथ ही उन्होंने कैप्शन में लिखा है, "हाउस अरेस्ट में भी विरोध जारी है." बाद में उन्हें पुलिस स्टेशन ले जाया गया और अगले चार दिनों तक हिरासत में रखा गया.

इस तरह उत्तरप्रदेश की सरकार ने लोगों के विरोध प्रदर्शन के अधिकारों का दमन किया. इसके लिए उन्होंने धारा 144 व इंटरनेट शटडाउन को हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया. मनमाने ढंग से लोगों को गिरफ्तार किया गया. पुलिस हिरासत में भी लोगों के साथ अमानवीय व्यवहार किए गए. पुलिस प्रशासन ने समुदाय में सामाजिक और राजनीतिक गतिशीलता के लंबे समय से चले आ रहे ढाँचों को ध्वस्त करने का प्रयास किया.

प्रदर्शनकारियों पर की गई हिंसक कार्रवा

राज्य में धारा 144 लागू होने और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं व सामुदायिक नेताओं पर की गई कार्रवाई व धमकियों के बावजूद प्रदेश के कई हिस्सों में हजारों लोग शुक्रवार को जुमे की नमाज के बाद अनायास ही विरोध प्रदर्शन करने के लिए इकट्ठा हो गए. हमारी तथ्य जांच टीम से बात करते हुए मुजफ्फरनगर के एक प्रत्यक्षदर्शी ने बताया कि किसी को भी उम्मीद नहीं थी कि लोग इतनी बड़ी तादाद में बाहर आएंगे. इतने ही लोग उस दिन भी निकले थे जब साल 1976 में आपातकाल के विरोध में प्रदर्शन हुए थे. तब और अब में अंतर यह है कि इस प्रदर्शन के दौरान लोगों के हाथ खाली थे.

हमारी तथ्य जांच टीम ने संभल के चंदौसी चौक, मेरठ में जामा मस्जिद, लखनऊ में परिर्वतन चौक, मुजफ्फरनगर में महावीर चौक, फिरोजाबाद में सिटी सेंटर चौराहा और कानपुर व वाराणसी के विभिन्न हिस्सों में मौजूद लोगों से बातचीत की. इन सभी इलाकों में लोगों ने हमें बताया कि इन प्रदर्शनों के दौरान प्रदर्शनकारियों की भीड़ के आसपास भारी संख्या में पुलिसकर्मी मौजूद थे. थोड़ी ही देर में पुलिसकर्मियों ने बल प्रयोग शुरू कर दिया. इस दौरान प्रदर्शनकारियों पर लाठीचार्ज किया गया, आंसू गैस गोले छोड़े गए और इसके साथ ही पुलिस ने गोलियां भी चलाई.

हिंसक विरोध प्रदर्शन या उपद्रवियों ने की हिंसा?

विभिन्न तथ्य जांच टीम और स्थानीय अखबारों में छपी रिपोर्ट्स के मुताबिक पुलिस ने यह कहते हुए अपना बचाव किया कि उनकी यह कार्रवाई क्रिया के जवाब में प्रतिक्रिया की तरह थी. उनका कहना है कि कुछ शहरों में प्रदर्शनकारियों ने हिंसा की जिसके जवाब में उन्हें भी बल प्रयोग करना पड़ा. 21 दिसंबर 2019 को पुलिस ने कहा कि प्रदर्शनकारियों ने पुलिस चौकी पर आग लगाकर कानपुर पुलिस को जवाबी कार्रवाई के लिए उकसाया. लखनऊ, गोरखपुर, बुलंदशहर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, भदोही, फिरोजाबाद, बहराइच और जौनपुर में भी ऐसी ही घटनाएं सामने आईं, जहां कथित तौर पर प्रदर्शनकारियों ने वाहनों को जला दिया और हिंसा भी की. बुलंदशहर और फिरोजाबाद में स्थिति कुछ अधिक तनावपूर्ण हो गई थी.

हालांकि, जैसा कि अनिर्बान भट्टाचार्य ने अपनी गवाही में उल्लेख किया है कि इन प्रदर्शनों के दौरान प्रदर्शनकारियों के बीच उपद्रवियों के मौजूद होने के पर्याप्त सबूत मिले हैं. उनका कहना है कि कुछ ऐसे बदमाशों की पहचान हुई है जो एजेंट के तौर पर हिंसा भड़काने की मकसद से प्रदर्शनकारियों के बीच घुस आए थे.

कांग्रेस कार्यकर्ता सदफ जाफर बताती हैं कि जब लखनऊ में परिवर्तन चौक पर एक शांतिपूर्ण सभा चल रही थी, तभी वहां कुछ दंगाई पहुंच गए. उन सभी ने एक समान दिखने वाली टोपी पहन रखी थी. सदफ आगे बताती हैं कि दंगाइयों ने प्रदर्शन स्थल पर दो अलग-अलग छोरों पर पथराव व आगजनी शुरू कर दिया. जबकि तीसरे छोर पर पुलिस बैरिकेडिंग थी. सदफ ने

पुलिस से अपील की कि वह उनकी तरफ आ रहे एक बदमाश को पकड़ ले, लेकिन पुलिस बेपरवाह दिखी. इसके बाद सभा में शामिल कुछ प्रदर्शनकारियों ने ही उस बदमाश को पकड़ा और पुलिस को सौंप दिया. सदफ बताती हैं कि पुलिस ने इसके बाद भी उस दंगाई के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की. इसके विपरीत, सदफ और पवन राव अंबेडकर समेत शांतिपूर्ण सभा में शामिल लोगों को पुलिस हिरासत में बेरहमी से पीटा गया.

इसी तरह मेरठ में प्रदर्शनकारियों पर पुलिस की गोलीबारी और दमन को यह कहते हुए सही ठहराया गया कि प्रदर्शनकारियों ने इस्लामाबाद पुलिस चौकी में तोड़फोड़ की है. जब अधिवक्ता अकरम समेत अन्य लोग इस बात की पुष्टि करने के लिए उस पुलिस चौकी पर पहुंचे तो उन्होंने पाया कि यह बिल्कुल झूठ है. अकरम के मुताबिक उक्त पुलिस चौकी की इमारत में कोई तोड़फोड़ नहीं हुई है. इमारत की दीवारों की हाल ही में पोता गया है. इसके साथ ही इमारत की कांच की खिड़कियां भी बिल्कुल सुरक्षित हैं. फैक्ट फाइंडिंग टीम के मुताबिक भाजपा नेता लक्ष्मीकांत बाजपेयी और उनके कुछ गुंडों ने पुलिस चौकी के एक कोने पर कुछ स्टेशनरी और फाइलों को जला दिया था. ऐसा इसलिए किया गया ताकि पुलिस की बर्बर कार्रवाई को सही ठहराया जा सके.

संभल में हमारी तथ्य जांच टीम ने जब स्थानीय लोगों से बातचीत की तो उन्हें पता चला कि 19 और 20 दिसंबर की हिंसक घटनाओं के संबंध में वहां के लोगों में दो तरह की मान्यताएं है.

स्थानीय पुलिस कथित तौर पर पुलिस के मुखबिर के रूप में कुछ लोगों को रखती है. लोगों के मुताबिक इन्हीं लोगों ने 19 दिसंबर को चंदौसी में पथराव शुरू किया था. उनमें से एक व्यक्ति को उसके पड़ोसी ने टीम से बात करते हुए एक वीडियो फुटेज में देखा भी था.

दूसरा यह कि विभिन्न अवसरों पर स्थानीय मुसलमानों के खिलाफ भाजपा और पुलिस द्वारा स्थानीय वाल्मीकि समुदाय को लामबंद किया जाता है. शंकर चौराहे के आसपास के इलाकों में सड़क की एक तरफ दलित समुदाय के लोग व दूसरी ओर मुसलमान समुदाय के लोग रहते हैं. यहां 20 दिसंबर को वाल्मीकि समुदाय के कुछ युवकों ने विरोध प्रदर्शन कर रहे मुसलमानों पर पथराव किया. स्थानीय लोगों ने बताया कि इन युवकों को पुलिस का पूरा समर्थन था और उन्हें किसी भी तरह से रोका नहीं गया.

पूर्व सांसद सुभाषिनी अली के मुताबिक पश्चिमी यूपी में यूपी सरकार ने कुछ युवकों को पुलिस के सहयोगी के तौर पर रखा है, जिसे वे "पुलिस मित्र" कहते हैं. इन लोगों को विज्ञापन, योग्यता, नियमों और विनियमों के बिना ही भर्ती कर लिया जाता है. इसके साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि पुलिस के इन कथित सहयोगियों को लाठी, बिल्ला, जैकेट और आईडी कार्ड भी जारी किए जाते हैं.

हमारी तथ्य जांच टीम के मुताबिक मुजफ्फरनगर में भी कुछ लोग घरों में तोड़फोड़ करने के मकसद से घुस गए. ये लोग सादे कपड़ों में थे लेकिन इसके साथ ही उन्होंने पुलिस जैकेट व हेलमेट पहन रखा था. इसी तरह फिरोजाबाद में भी स्थानीय कार्यकर्ताओं ने बताया कि पुलिस के साथ ही सादे कपड़ों में कुछ युवक थे. इन युवकों ने अपने चेहरे को कपड़ों से ढ़ंक रखा था. संभवत: ये युवक ही "पुलिस मित्र" थे.

30 जनवरी 2020 को 20 दिसंबर की घटना से संबंधित हुई 83 अभियुक्तों में से 48 आरोपियों की जमानत याचिका पर सुनवाई करते हुए बिजनौर में एक न्यायाधीश ने कहा, "पुलिस ने एफआईआर में दावा किया है कि भीड़ ने निजी और सरकारी वाहनों में तोड़फोड़ की और इसके साथ ही दुकानों में आगजनी भी की. लेकिन इस बात के कोई भी प्रमाण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं." न्यायाधीश ने आगे यह भी कहा कि एक सरकारी वाहन को नुकसान से संबंधित एक रिपोर्ट पुलिस ने पेश की है, लेकिन यह रिपोर्ट हिंसा होने के कम से कम 20 दिनों बाद तैयार की गई है." इसके साथ ही न्यायाधीश ने आगे कहा, "सरकारी वकीलों का कहना है कि इस घटना में 13 पुलिसकर्मी घायल हुए हैं, लेकिन इन सभी पुलिसकर्मियों की मेडिकल रिपोर्ट के अनुसार इन्हें मामूली चोटें आईं है." और इस प्रकार उन्होंने पुलिस के उन दावों को संदेह में डाल दिया जिसमें उन्होंने हिंसक भीड़ पर जवाबी कार्रवाई की बात कही थी.

नवशरण सिंह ने न्यायाधिकरण में अपनी गवाही के दौरान तर्क दिया कि स्थानीय पुलिस के साथ सादे कपड़े वाले बदमाशों का जुड़ना एक नए चलन को दर्शाता है. हिंसा के दौरान पुलिस इन सादे कपड़े वाले बदमाशों को कुछ नहीं करती और मूकदर्शक की भूमिका में आ जाती है.

पुलिस की गोलीबारी से हुई हिंसा में बढ़ोतरी

मुजफ्फरनगर के खालापार, नयाबादी मोहल्ले की तंग गलियों में एक टेंपो चालक नूर मोहम्मद के परिवार ने हमारी तथ्य जांच टीम से बातचीत की. नूर मोहम्मद अपने परिवार में अकेले कमाने

हिंसा में घायल प्रदर्शनकारी -

मेरठ में -

28 साल के मोहसिन को सीने में गोली लगी है.

40 साल के ज़हीर को उनकी एक आंख पर गोली लगी है.

23 साल के अलीम के सिर पर गोली लगी है.

20 साल के आसिफ के सीने में गोली लगी है.

33 साल के आसिफ को उसके पीठ पर एक गोली लगी है.

संभल में -

31 वर्षीय बिलाल को उसके निचले होंठ के नीचे गोली लगी है.

19 साल के शेहरोज़ को उसके पेट में गोली लगी है.

मुजफ्फरनगर में -

25 वर्षीय नूरा को उसके पर चोट लगी है.

फिरोजाबाद में -

19 साल के मुकीम को उसके पेट में चोट लगी है.

27 वर्षीय राशिद के सिर पर गोली लगी है.

24 साल के अरमान को सीने में गोली लगी है.

हारून को उसके जबड़े में चोट लगी है.

39/40 वर्षीय शफीक को कान के पास चोट लगी है.

वाले हैं. उनकी पत्नीं गर्भवती हैं, इसके साथ ही उनकी एक बेटी भी है. परिवार के एक सदस्य के

अनुसार, 20 दिसंबर की दोपहर को, नूर मोहम्मद अपने टेंपो से घर की ओर लौट रहे थे. उसी दौरान वह ऐसी जगह पर पहुंच गए जहां पुलिस गोलियां चला रही थी. यह देखकर नूर मोहम्मद ने अपना टेंपो वहीं छोड़ दिया और फिर उन्हें अपनी जान बचाने के लिए वहां से भागना पड़ा.

लगभग सभी शहरों में प्रदर्शनकारी नागरिकों पर गोलीबारी का सहारा लेने के लिए पुलिस को जल्दी थी. पुलिस ने भीड़ की इस हिंसा को रोकने के लिए और कोई उपाय करना जरूरी नहीं समझा और सीधे गोलीबारी कर दी. जानकारी के अनुसार मेरठ, मुजफ्फरनगर, संभल, फिरोजाबाद, बिजनौर, कानपुर, गोरखपुर, और कई अन्य क्षेत्रों में भी पुलिस ने फायरिंग की है.

मैत्रेयी गुप्ता जो कि एक कार्यकर्ता हैं, ने बताया कि कानपुर में प्रदर्शनकारियों पर लाठीचार्ज किया गया, आंसू गैस के गोले छोड़े गए और गोलियां भी चलाई गई. उन्होंने बताया कि पुलिस ने आंसू गैस के तुरंत बाद ही गोलियां चला दी. जबकि इसके पहले वाटर-कैनन अथवा रबर की गोलियों का इस्तेमाल भी किया जा सकता था. इसी तरह संभल, मुजफ्फरनगर और मेरठ में भी पुलिस ने इसी पैटर्न पर काम किया. यहां भी पुलिस ने लाठीचार्ज के तुरंत बाद ही गोलियां चला दी. एक बात और ध्यान देने की है कि सभी जगहों पर पुलिस ने कमर के ऊपर गोली चलाई है.

वहीं फिरोजाबाद में पुलिस ने अचार संहिता के विपरीत पहले भीड़ पर गोलीबारी की और उसके बाद आंसू गैस व लाठीचार्ज का इस्तेमाल किया गया. इसके अलावा मेरठ में फैक्ट फाइंडिंग टीम को लोगों ने बताया कि जब पुलिसकर्मी लोगों पर गोलियां चला रहे थे तब उनके साथ लगभग 50 से 100 की संख्या में अन्य लोग भी थे जो पुलिसकर्मियों के साथ मिलकर भीड़ पर गोलियां चला रहे थे.

इस दौरान हमारी फैक्ट-फाइंडिंग टीम ने मुजफ्फरनगर, मेरठ, फिरोजाबाद और संभल में मारे गए लोगों के परिवारों का भी दौरा किया. पश्चिमी यूपी में मारे गए सभी 16 लोग मुस्लिम समुदाय के हैं. ये सभी लोग मजदूर वर्ग के युवक थे. इन सभी के परिवार ने लगभग एक जैसी बात बताई कि ये युवक प्रदर्शन में शामिल नहीं थे. ये गलत समय पर गलत जगह पर पहुंच गए जिसकी वजह से इनकी मौत हो गई. मारे गए इन 16 लोगों में से 14 लोगों को कमर के ऊपर गोलियां लगी हैं.

इसी तरह फिरोजाबाद में भी स्थानीय लोगों का आरोप है कि पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर जानबूझ कर निशाना साधा और उन्हें कमर के ऊपर गोलियां दागी गई. बिजनौर के जिला अस्पताल के एक वरिष्ठ डॉक्टर ने रिपोर्टरों को बताया कि अनस को पुलिस ने उनकी बाईं आंख में गोली मार दी थी. यह गोली काफी करीब से दागी गई थी.

20 दिसंबर को लगभग 4 बजे अरशद (बदला हुआ नाम) पतंग उड़ा रहा था. तभी उसने लिसाड़ी रोड, मेरठ में अपने घर के पास ही कुछ हंगामा सुना. इसके बाद वह हंगामें की जांच करने उस ओर गया. जब वह वहां पहुंचा तो पुलिस ने उसपर गोली चलाई. गोली उसके हाथ में लगी और वह तुरंत बेहोश होकर गिर पड़ा. गोली लगने

की वजह से उसकी तीन उंगलियां टूट गईं हैं.

यूपी पुलिस द्वारा गोलियां चलाने की कई रिपोर्ट के बावजूद 20 दिसंबर को पुलिस ने दावा किया कि उन्होंने एक भी गोली नहीं चलाई है अथवा उनकी गोली से एक भी व्यक्ति की मौत नहीं हुई है. उत्तरप्रदेश के पुलिस महानिदेशक (डीजीपी) ने संवाददाताओं को बताया, "सभी मौतें क्रॉस फायरिंग में हुई हैं और पोस्टमार्टम रिपोर्ट में यह स्पष्ट हो जाएगा."

इसके बाद मंगलवार 24 दिसंबर को पुलिस अधीक्षक (ग्रामीण) विश्वजीत श्रीवास्तव ने स्वीकार किया कि बिजनौर के नहटौर में एक हिंसक भीड़ पर कार्रवाई करते हुए पुलिसकर्मियों द्वारा गोली चलाई गई जिससे एक 22 वर्षीय व्यक्ति की मौत हो गई. उन्होंने बताया, "20 दिसंबर यानी शुक्रवार को जुमे की नमाज के बाद हिंसक भीड़ ने एक पुलिस स्टेशन पर हमला किया और उप-निरीक्षक आशीष तोमर की पिस्तौल छीन ली." एसपी ने आगे कहा, " इसके बाद जब कॉन्स्टेबल ने आत्मरक्षा में गोली चलाई, तो एक अपद्रवी सुलेमान को यह गोली लग गई और उसकी मौत हो गई।" यह अब तक पुलिस फायरिंग की एकमात्र ऐसी घटना है जिसकी पुलिस ने जिम्मेदारी ली है.

यूपी के बिजनौर जिले में एक सत्र न्यायालय के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश संजीव पांडे ने विरोध प्रदर्शन के दौरान मारपीट और हत्या के आरोपी सात लोगों के संबंध में जमानत की अर्जी को स्वीकार किया. इस दौरान 24 जनवरी को उन्होंने कहा, "अभियोजन पक्ष ने तर्क दिया है कि पथराव के दौरान पुलिस अधिकारी घायल हो गए. हालांकि, अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसा कोई सबूत पेश नहीं किया गया है जिससे यह साबित हो सके. पुलिस ने जब्त की गई 315 बोर की गोलियां भी दिखाई. हालांकि इनमें से किसी भी आरोपी व्यक्ति के पास से हथियारों का जखीरा नहीं मिला है. अभियोजन पक्ष के अनुसार, किसी भी पुलिस अधिकारी को कोई गोली नहीं लगी है. मुझे बताया गया है कि पुलिस अधिकारियों को पथराव की वजह से कुछ चोटें आई हैं. हालांकि, ऐसा कोई सबूत पेश नहीं किया गया है जो यह साबित करता हो कि किसी को गंभीर चोट लगी है."

इस प्रकार, यह दर्शाता है कि बिजनौर के मामले में पुलिस के पास दिखाने के लिए ऐसा कोई सबूत नहीं है जिससे प्रदर्शनकारियों पर की गई इस कार्रवाई को उचित ठहराया जा सके. यह और बात है कि केवल बिजनौर में ही पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलीबारी की जिम्मेदारी ली है. क्या उन सभी लोगों को इसके लिए जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए जो मारे गए या घायल हुए हैं? यूपी में पुलिस की यह कार्रवाई आदर्श आचार संहिता, आदर्श पुलिस अधिनियम और जम्मू-कश्मीर राज्य बनाम अनीता ठाकुर मामले में शीर्ष अदालत द्वारा दिए गए फैसले का घोर उल्लंघन है.

इस तरह यह कानून स्पष्ट है कि निजी रक्षा का अधिकार प्रतिक्रिया की आनुपातिकता की आवश्यकता से सीमित है. इस रिपोर्ट में शामिल किए गए विभिन्न प्रत्यक्षदर्शी गवाहों की बातों से साबित होता है कि पुलिस ने भीड़ में अंधाधुंध गोलियां चलाई है.

Watch: https://www.youtube.com/watch?v=ssy_TvdnjPM&bpctr=1581342498

पुलिस ने किया अपशब्दों और गालियों का इस्तेमाल

पुलिस द्वारा की गई हिंसा की सभी घटनाओं में (सड़कों पर, घरों के अंदर और हिरासत में) एक और बात समान रही. इस दौरान उसने अभद्र भाषा का लगातार और जानबूझकर इस्तेमाल किया. कुछ जगहों पर हिंदूओं को मुस्लिम दुकानों और घरों पर आग लगाने और लूटने के लिए उकसाया भी गया.

फिरोजाबाद में लोगों ने हमारी तथ्य जांच टीम को बताया कि पुलिस ने प्रदर्शनकारियों को उन सड़को पर दौड़ाया जहां ज्यादातर हिंदू रहते हैं. इस दौरान पुलिस ने सड़क पर खड़े हिंदू दर्शकों को उकसाते हुए कहा, "हम हिंदू हैं, तुम भी हिंदू हो, मारो!" उन्होंने आगे यह कहते हुए स्थानीय हिंदू समुदाय को उकसाया कि हमारे हिंदू भाइयों ने ही इन मियां (मुसलमानों) को प्रोत्साहित किया है, अन्यथा उन्हें कुछ कहने का अधिकार नहीं है. इसके साथ ही पुलिस ने आगे यह भी कहा, "हमे तो अभी दो घंटे ही दिए गए हैं. अगर दो दिन दे दें तो इन्हें (मुसलमानों को) बता दें कि हम कौन हैं."

20 दिसंबर को मेरठ में पुलिस अधीक्षक (एसपी) अखिलेश नारायण सिंह मुसलमानों को धमकाते हुए कैमरे में कैद हुए. इस दौरान उन्होंने भी कुछ इस तरह से अभद्र भाषा का इस्तेमाल किया -

- "कहां जाओगे? इस गली को मै ठीक कर दूंगा."
- "जिन्होंने काली पट्टी और नीली पट्टी बांध रखा है उन्हें कह दो पाकिस्तान चले जाएं."
- "देश में अगर नहीं रहने का मन है तो चले जाओ भैया...खाओगे यहां का और गाओगे कहीं और का. ये गली मुझे याद हो गई है और जब मुझे याद हो जाता है तो मैं नानी तक पहूंच जाता हूं."
- "एक-एक घर के एक-एक आदमी को जेल में भर दूंगा मैं."

अनिर्बान भट्टाचार्य ने मुजफ्फरनगर में अपनी फैक्ट-फाइंडिंग के आधार पर कहा कि शहर में पीड़ित परिवारों के सदस्यों और गिरफ्तार लोगों का मानना है कि मुजफ्फरनगर में सांप्रदायिक तनाव का अपना इतिहास रहा है. इस इतिहास की परवाह किए बिना ही पुलिस ने जानबूझकर भीड़ को हिंसा के लिए उकसाने का काम किया. हिरासत में प्रताड़ित एक नाबालिग के परिवार के एक सदस्य के अनुसार, पुलिस निरीक्षक संजय त्यागी ने समुदाय के लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया और धमकी भी दी, जिससे भीड़ नाराज हो गई.

पुलिस, आरएएफ और पुलिस के सहयोगियों के द्वारा बड़े पैमाने पर अभद्र भाषा का इस्तेमाल किया गया. इस दौरान पुलिस ने प्रदर्शनकारियों के लिए "कठमुल्ला", "जिहादी" और "पाकिस्तानी" जैसे शब्दों का इस्तेमाल किया.

मुजफ्फरनगर में नवशरण सिंह ने बताया कि पुलिस ने लोगों पर हमला करते हुए नागरिकता संशोधन कानून के बारे में कहा कि इस कानून के जरिए उन्हें पाकिस्तान जाने का लाइसेंस दिया जाएगा.

इसी तरह की नफरत मानवाधिकार कार्यकर्ताओं के लिए भी देखी गई. लखनऊ के एक मानवाधिकार कार्यकर्ता दीपक कबीर, जिन्हें गिरफ्तार किया गया था और पुलिस हिरासत में प्रताड़ित भी किया गया था, ने ट्रिब्यूनल में गवाही देते हुए कहा कि जब पुलिस उन्हें मार रही थी तो उन्होंने कहा, "इनकी सारी क्रांतिकारिता निकाल दो, इनका भगत सिंह निकाल दो." एक अन्य मानवाधिकार कार्यकर्ता सदफ जाफ़र, जिन्हें अवैध रूप से हिरासत में रखा गया था और प्रताड़ित किया गया था, कहती हैं, "जब भी पुलिसकर्मी मेरे पास से गुजरते, वे मेरा नाम पूछते और मुझे 'पाकिस्तानी' कहते. वे मुझे गाली देते देते हुए कहते कि मैं यहाँ का खाता हूँ, लेकिन वफादारी वहां की करता हूं. यह बहुत घटिया था. उन्होंने हमेशा मुझे 'तुम लोग' कहकर संबोधित किया. इस दौरान मुझे हिटलर के जर्मनी में एक यहूदी की तरह महसूस हुआ. मुझे इस तरह के व्यवहार का सामना केवल इसलिए करना पड़ा क्योंकि मैं एक मुस्लिम हूं. लेकिन इसके अलावा मैं एक सामाजिक कार्यकर्ता, कवि और थियेटर कार्यकर्ता भी हूं."

बड़े पैमाने पर लोगों को किया गया नज़रबंद

इस पुलिस हिंसा की एक विशेषता यह भी है कि इसमें नागरिकों को गैरकानूनी तौर पर हिरासत में लिया गया और मानवाधिकारों कार्यकर्ताओं व समुदाय के नेताओं की अनदेखी की गई है. विरोध स्थलों और सड़कों से लोगों को उठाकर बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां की गई.

22 साल का आमिर (बदला हुआ नाम) संभल का रहने वाला है. उसे एक बस स्टैंड से पुलिस ने उठा लिया. इसके साथ ही पुलिस ने उसके अन्य दोस्तों को भी गिरफ्तार कर लिया व उनके घरों में तोड़फोड़ की. उन्हें धनारी पुलिस स्टेशन ले जाया गया. उनके किसी भी रिश्तेदार को स्टेशन पर उनसे मिलने की इजाजत नहीं दी गई. आमिर की बहन ने फैक्ट-फाइंडिंग टीम को बताया कि उसे हिरासत में बेरहमी से पीटा गया है. और इसके साथ ही उसपर हर्जाने के तौर पर 2,63,000 रुपये का जुर्माना ठोक दिया गया है.

पुलिस की दलील है कि वह वीडियो फुटेज के आधार पर उपद्रवियों की पहचान कर कार्रवाई कर रही है जबकि सच्चाई यह है कि लोगों को उनके घरों से बिना किसी कारण उठाया जा रहा है. हिरासत में रखे गए लोगों के बारे में पुलिस संबंधित परिवारों को कोई जानकारी नहीं दे रही है. सबसे बुरी बात तो यह है कि पुलिस के इस रवैये के कारण लोगों को क़ानूनी मदद भी मुहैया नहीं हो पा रही.

फिरोजाबाद का इक़बाल (बदला हुआ नाम) गंभीर रूप से बीमार था और पुलिस स्टेशन के रास्ते से गुजर रहा था. तभी पुलिस ने उस पर हमला बोल दिया. पुलिस ने इतनी बेरहमी से मारा कि उसके पैरों की हड्डी पूरी तरह से टूट गई. इसके बाद दंगा भड़काने और आगजनी के आरोप में उसे हिरासत में बंद कर दिया गया. इस

दौरान उसके पैरों का कोई ईलाज पुलिस ने नहीं कराया. बता दें कि इक़बाल की गिरफ़्तारी के बाद पुलिस उसे सीधे थाने लेकर नहीं गई थी. इक़बाल के भाई का कहना है कि उसे सबसे पहले आरएसएस द्वारा संचालित कलावती देवी स्कूल ले जाया गया, जहां आरएसएस से जुड़े लोगों ने उसकी पिटाई की. यहां इक़बाल के साथ-साथ कई नाबालिग और बच्चों को भी पुलिस ने हिरासत में रखा था. इक़बाल को पहले रसूलपुर पुलिस स्टेशन और उसके बाद माखनपुर पुलिस स्टेशन ले जाया गया.

संभल जिले में 19 और 20 दिसंबर की हिंसा के बाद पुलिस ने बड़े पैमाने पर लोगों की गिरफ़्तारियां की हैं. एक लड़का ट्यूशन से पढ़ाई करके घर लौट रहा था, पुलिस ने उसे भी उठा लिया. वकील क़मर हुसैन ने बताया कि यहां से 55 लोगों को पुलिस ने हिरासत में लिया है, जिसमें नाबालिगों की भी अच्छी-खासी संख्या है.

मैत्रेयी गुप्ता के मुताबिक मऊ जिले में देर रात पुलिस लोगों के घरों में घुसी. उनके साथ कोई महिला सुरक्षाकर्मी नहीं थी. पूछताछ के बहाने पुलिस औरतों को थाने लेकर गई. जन-सुनवाई के वक्त उन महिलाओं की गिरफ़्तारी के 2 हफ्ते बीत गए हैं और उन्हें अभी तक रिहा नहीं किया गया है. लखनऊ में ग़लत तरीके से एस आर दारापुरी को गिरफ़्तार किया गया. पुलिस पहले से ही उन पर दबाव बना रही थी कि वे किसी भी विरोध-प्रदर्शन में शामिल ना हों. फिर भी 20 दिसंबर की रात बजे पुलिस उनको जबरन थाने बुलाकर ले गई. पूछताछ में पुलिस ने बताया कि दारापुरी की गिरफ़्तारी नहीं की गई है बल्कि उन्हें एहतियातन थाने में बैठना पड़ेगा.

मेरठ में लोगों को भय था कि किसी भी बाहरी व्यक्ति से पुलिस की शिकायत करने पर पुलिस उन्हें घर से उठा लेगी. इसलिए तथ्य जांच टीम शुरुआत में पीड़ित परिवारों से नहीं मिल सकी. लेकिन, जब टीम ने दूसरी बार मेरठ का दौरा किया, तब पता चला कि अभी भी लोगों की गिरफ़्तारियां हो रही हैं. हमें यह भी जानकारी मिली कि हिरासत में रखे गए लोगों के बारे में पुलिस कोई जानकारी साझा नहीं कर रही.

पीड़ितों के परिवारों और मुजफ़्फ़रनगर के एक स्थानीय पत्रकार ने बताया कि प्रदर्शनों के बाद से यहां से करीब 2000 लोगों को पुलिस ने गिरफ़्तार किया है और उनमें से कुछेक लोगों की ही रिहाई हुई है. स्थानीय पत्रकार के मुताबिक पुलिस ने यहां से मदरसे के 42 छात्रों को हिरासत में लिया है. उन्हें ग़ैर-क़ानूनी तरीके से उठाया गया है और पुलिस उनपर अत्याचार कर रही है.

मुजफ़्फ़रनगर में की वकीलों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने तथ्य जांच टीम को बताया कि बड़े पैमाने पर बच्चों और आम लोगों को पुलिस ने हिरासत में लिया और उन्हें थाने ले जाने की बजाय सिविल लाइंस के पुलिस ट्रेनिंग सेंटर लेकर गई. यहां लोगों के कपड़े उतार कर उन्हें पंखे के नीचे बिठाया गया. नकाबपोश लोगों ने वहां लोगों को बुरी तरह मारा. अगले कुछ दिनों में हिरासत में बंद लोगों को रिहा किया गया और 100 लोगों के ऊपर मुक़दमा लाद दिया गया. यह जानना जरूरी है कि पुलिस ने हिरासत में बंद लोगों का कोई रिपोर्ट सार्वजनिक नहीं किया है क्योंकि यह कार्रवाई पूरी तरह से ग़ैर-क़ानूनी थी.

संपत्ति को नुक़सान पहुंचाती पुलिस

तथ्य जांच टीम और सबूतों से यह साबित होता है कि रेपिड एक्शन फोर्स, यूपी पुलिस और पुलिस

मित्र की तिकड़ी ने आम लोगों के घरों को भारी नुक़सान पहुंचाया. कई इलाके में लोगों के दुकानों और निजी वाहनों के साथ तोड़फोड़ की गई. मुसलमानों के घरों तक में घुसकर पुलिस सारी संपत्ति तहस-नहस की.

तथ्य जांच टीम की रिपोर्टों और गवाहों से साबित होता है कि मुजफ़्फ़रनगर, मेरठ और कानपुर की गलियों में पुलिस और रैपिड एक्शन फोर्स के जवानों ने रात में स्ट्रीट लाइट बंद हो जाने के बाद घरों में तोड़फोड़ मचाया. मुजफ़्फ़रनगर में रात के साढ़े दस बजे पुलिस ने आम लोगों के घरों-दुकानों और यहां तक कि मस्जिदों में घुसकर भी तोड़फोड़ मचाया. मेरठ में पुलिस ने स्ट्रीट लाइट्स को बंद करके सीसीटीवी कैमरों को तोड़ा और अन्य चीजों को भारी नुक़सान पहुंचाया.

Watch: https://www.youtube.com/watch?v=4qLfMyeY7XU

आम लोगों की संपत्ति को सबसे अधिक नुक़सान मुजफ़्फ़रनगर में पहुंचाया गया. स्थानीय लोगों का कहना है कि 20 दिसंबर 2019 की रात को 250 से 300 की संख्या में रैपिड एक्शन फोर्स के जवान बस्ती में आए और तोड़फोड़ मचाने लगे. पुलिस के साथ सादे लिबास में नकाबपोश लोग थे और ये सभी मुसलमानों के ख़िलाफ़ भड़काऊ नारे लगा रहे थे. हर्ष मंदर ने गवाही दी कि मुजफ़्फ़रनगर के एक के बाद एक घरों में जाकर पुलिस ने आम लोगों और बेकसूरों की संपत्ति को पूरी तरह से बर्बाद किया.

तथ्य जांच टीम ने दर्जीवाली गली के एक और सरवत रोड पर स्थित दो घरों का दौरा किया. इन घरों को पुलिस और रैपिड एक्शन फोर्स के जवानों ने तबाह कर दिया था. दर्जीवाली गली में एक परिवार के यहां जाते हुए हमें एक मस्जिद दिखी जिसके भीतर पुलिस ने भारी तबाही मचाई थी. मस्जिद के दरवाजे, बिजली के मीटर को भी पुलिस ने तोड़ा था. पुलिस की टूटी हुई लाठियां और रैपिड एक्शन फोर्स के जवानों की टोपी हमें रास्ते पर पड़ी मिली.

तथ्य जांच टीम ने जूते के एक दुकानदार से मुलाकात की. इनके घर में पुलिस ने तोड़फोड़ मचाई थी. इन्होंने बताया कि 20 दिसंबर की रात करीब 50-60 पुलिसकर्मी घर का दरवाजा तोड़कर अंदर घुसे. उस समय घर में परिवार की तीन औरतें मौजूद थीं. घर के भीतर हमने तबाही का मंजर देखा. उनके मारूती (डिजायर) कार, चार स्कूटर, टॉयलेट, वॉशबेसिन, फर्नीचर, अलमीरा, पंखा, लाइट, कूलर और रेफ्रिजरेटर आदि को नुक़सान पहुंचाया था. एक के एकमात्र पुरुष सदस्य और बुजुर्ग को पुलिस ने बुरी तरह मारा था और महिलाओं के साथ बदतमीजी की गई थी. पीड़ित परिवार ने बताया कि घर में शादी होने वाली थी, उसके लिए रखे कैश और गहनों को भी पुलिस ने लूट लिया.

सुभाषिनी अली ने बयान दिया कि कानपुर में पुलिस ने 22 दिसंबर की रात को चमनगंज नामक मुहल्ले पर धावा बोल दिया. इस इलाके में

रहने वाले लोगों की निजी संपत्तियों को पुलिस ने भारी नुक़सान पहुंचाया. फिरोजाबाद में तथ्य जांच टीम को जानकारी मिली कि राशिद (बदला हुआ नाम) के एक शख़्स की नई सिलाई मशीन को पुलिस ने तोड़ दिया गया और मुसलमानों को धमकाया गया. जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है उत्तर प्रदेश में पुलिस ने पुलिस मित्र नाम का मुख़बिर गांवों में बना रखा है, जो पुलिस के साथ मिलकर लोगों के घरों तक में तोड़फोड़ मचाते हैं.

वकील अंजली भारद्वाज ने 16 जनवरी 2020 को हुए जन-सुनवाई के बारे में ट्विटर पर लिखा. इस पर मुजफ़्फ़रनगर पुलिस ने ट्विटर पर ही लिखा, "मुजफ़्फ़रनगर पुलिस द्वारा कार्रवाई के बारे में अफ़वाह फैला कर दुर्भावनापूर्ण अभियान चलाया जा रहा है. सूचित करना है कि 20.12.2019 को हिंसक भीड़ ने आगजनी, पत्थरबाजी और कई जगहों पर फायरिंग की, जिसे रोकने के लिए पुलिस ने न्यूनतम बल का प्रयोग किया". पुलिस ने यह बयान देते हुए उन तमाम तथ्यों और सबूतों को नज़रअंदाज किया जिसमें पुलिस को उपद्रव मचाते हुए देखा जा सकता है.

नागरिकों के न्यायिक अधिकार के खिलाफ व्यवस्था के हथियार

अज्ञात लोगों पर एफआईआर

उत्तर प्रदेश में बीते साल 20 दिसंबर को हुई हिंसा का एक काला पक्ष ये भी रहा कि पुलिस ने कई शहरों में ढेरों "अनाम एफआईआर" दर्ज कीं. कानपुर के एसएसपी अनंत देव ने कहा, राज्य के कई शहरों में करीबन 21,500 लोगों के खिलाफ कम से कम 15 एफआईआर दर्ज की गई हैं. इनमें से 13 लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया है. पुलिस ने 12 लोगों को बेकनगंज और एक व्यक्ति को बिल्हौर से गिरफ्तार किया हैं.

प्राथमिकी में दर्ज अधिकतर लोगों की पहचान नहीं की जा सकी है.

बाबू पुरवा के पांच हजार और यतीमगंज के चार हजार लोगों के खिलाफ भी इसी तरह की शिकायत दर्ज की गई है. एफआईआर में दर्ज जानकारी से पता चलता है कि इसमें भी अधिकतर लोगों की पहचान नहीं हुई है.

मुजफ्फरनगर में पुलिस ने 300 "अनाम दंगा करने वालों" के खिलाफ आईपीसी की धारा 436 और 304 के तहत एफआईआर दर्ज की है. मेरठ में ये आंकड़ा 3000 तक पहुंच गया.

इतिहास के पन्ने पलटने पर पता चलता है कि पुलिस किसी समुदाय को आतंकित करने और मनमाने तरीके से हिरासत में लेने को वैध करार देने के लिए अनाम एफआईआर का इस्तेमाल करती है. इसके इस्तेमाल से पुलिस आसानी से आम जनता के खिलाफ मामला बुन पाती है ताकि उन्हें डराया-धमकाया जा सके. तमाम फैक्ट फाइंडिंग रिपोर्ट में समुदाय के लोगों के डर को दर्ज किया गया है. इस परिस्थितियों से गुजरे लोगों का कहना था कि उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वो इस संकटपूर्ण स्थिति का सामना कैसे करें, इसलिए भी क्योंकि राज्य प्रशासन ने हिरासत और गिरफ्तारी की कानूनी प्रक्रिया का पालन नहीं किया.

अज्ञात एफआईआर से डराए गए एक व्यक्ति ने ज्यूरी के एक सदस्य श्रीमान चमनलाल को बताया कि उत्तर प्रदेश में जो भी हुआ वो न्यायिक प्रक्रिया के खिलाफ है. हर मामले में एक अलग एफआईआर दर्ज की जानी चाहिए. प्रत्येक मामले के लिए एक एफआईआर दर्ज होती है जो एक जांचकर्ता को सौंपी जाती है. उत्तर प्रदेश में ये हो रहा है कि बहुत से मामलों को एक ही एफआईआर में दर्ज करके, एक जांचकर्ता को सौंप दिया जा रहा है.

परिवार या समुदाय को डराना

इस तरह के कदमों से समुदाय में डर का माहौल बना है. वहीं पुलिस सतर्कतापूर्वक समुदाय को डराने के लिए अलग-अलग हथकंड़ों को अपना रही है, जो उनके अधिकारों का हनन करता है.

वकील और कई फैक्ट फाइंडिंग समूहों का हिस्सा रहीं सुरूर मंदर ने ट्रिब्यूनल (जन सुनवाई) में बताया कि जब उन्होंने पुलिस के खिलाफ कानूनी प्रक्रिया का सहारा लेना चाहा तो राज्य प्रशासन की ओर से क्षेत्रीय वकीलों और समुदायों पर बहुत दबाव बनाने की कोशिश की गई. खासतौर से मौत के मामलों में प्रशासन द्वारा

लोगों पर दबाव बनाया गया कि वो पुलिस प्रक्रिया में दखल ना दें.

पुलिस ने मौत या घायल होने के मामलों में किसी भी कानूनी प्रक्रिया से बचने के लिए कई तरीकों का सहारा लिया.

फिरोजाबाद में जब वो घटना स्थल पहुंचे तो उन्हें तीन मृत लोगों के शरीर के साथ राशिद का भी शव मिला. इनमें से एक 7-8 साल के बच्चे का भी शव था. जब वो उसे लेकर फिरोजाबाद पुलिस थाने पहुंचे तो उन्हें डॉक्टर ने बताया कि वो पुलिस की गोली से घायल हुआ है. पुलिस के दबाव के कारण राशिद का पोस्टमॉर्टम नहीं हुआ. राशिद का शव अस्पताल ले जाने और फिर घर तक छोड़ने के दौरान पुलिस पूरा टाइम मौजूद थी. पुलिस ने घरवालों से दफनाने की प्रक्रिया को जल्दी पूरा करने पर जोर दिया. पुलिस उनके साथ रात में शव को दफनाने भी पहुंची. पुलिस ने उनसे सख्त लहजे में कहा कि वो अपने रिश्तेदारों, पड़ोसियों को इस बारे में ना बताएं.

मेरठ में भी मौत के सभी मामलों में पुलिस की ओर से इसी तरह की जल्दबाजी सामने आई. लगभग सभी मामलों में उन्हें अपने दफनाने की पुरानी जगहों पर ले जाने से रोका गया क्योंकि पुलिस का कहना था कि इससे तनाव का माहौल बढ़ेगा.

आसिफ नामक 20 वर्षीय रिक्शा चालक को कथित रूप से पुलिस ने सीने में गोली मारी. उसे रात में करीबन एक बजे अस्पताल ले जाया गया और लगभग तीन बजे के आस-पास उसे दफना दिया गया. उसके पड़ोसियों ने बताया कि आसिफ के साथ अंतिम रीति-रिवाजों को भी ठीक से नहीं किया गया. 23 वर्षीय दिहाड़ी मजदूर मोहसिन को भी सीने में गोली लगी. मोहसिन को दफनाने से पहले पुलिस ने घरवालों को उसकी बहन के आने तक का इंतजार करने से भी इनकार कर दिया. मोहसिन को सुबह उजाला होने से पहले ही बहुत कम परिवारवालों की मौजूदगी में ही दफना दिया गया. उन्हें भी अपने पारंपरिक दफनाने की जगह पर ले जाने से इनकार कर दिया गया.

पुलिस ने परिवारवालों को डराया और उन्हें परिजनों के मृत शरीर पर अधिकार से वंचित रखा. वहीं प्रशासन ने दमन की इन घटनाओं को खबर बनने से रोका.

पुलिस ने एफआईआर दर्ज करने और जांच को अपनी सहूलियत अनुसार इस्तेमाल करने के लिए भी ताकत का गलत इस्तेमाल किया. मुजफ्फरनगर में एक पत्रकार ने फैक्ट फाइंडिंग टीम को इस तरह की कई घटनाओं के बारे में बताया, जहां पुलिस ने डरा-धमका कर जांच को प्रभावित किया.

एक ऐसे ही मामले में नूर मोहम्मद नामक व्यक्ति की मौत हो गई. परिजनों ने इस मामले में बीजेपी सांसद के एक करीबी को आरोपी ठहराया लेकिन पुलिस ने उन्हें डराया ताकि आरोपी का नाम अज्ञात उपद्रवी के तौर पर दर्ज किया जाए.

मुजफ्फरनगर में अंत में टीम एक पुराने लकड़ी व्यापारी के घर पहुंची. रात में पुलिस अचानक इस 80 वर्षीय बूढ़े के घर में घुस गई और उसे बुरी तरह पीटा. उसकी किशोर पोती को भी पुलिस ने सर में चोट पहुंचाई. पुलिस ने उनके 40 वर्षीय बेटे साजिद और 13 वर्षीय पोते को गिरफ्तार कर लिया. साजिद की अपने घर के ही पास एक मेडिकल शॉप है. पुलिस ने व्यापारी के

पोते को एक दिन जेल में प्रताड़ित करने के बाद अगले दिन रिहा किया. उस बच्चे ने बताया कि पुलिस ने साजिद को प्रताड़ित किया और उससे एक कबूलनामा पर भी हस्ताक्षर करावाए. उसने कहा कि पुलिस ने एक पिस्तौल पर साजिद की उंगलियों के निशान भी लिए ताकि उसे फसाया जा सके. जब टीम बूढ़े व्यापारी के घर पहुंची तो उनके दोनों पोते-पोती हमें देखते ही डर से कांपने लगे. फैक्ट फाइंडिंग टीम के सामने वो गिड़गिड़ाते हुए कहने लगे कि "मुझे सिर्फ मेरा बेटा वापस कर दो, मुझे किसी के खिलाफ कोई शिकायत नहीं करनी है."

मेरठ में 45 वर्षीय जहीर की पुलिस की गोली लगने से मौत हो गई. ये घटना उसके इलाके में एक गली में हुई. जब घरवाले शिकायत दर्ज कराने पुलिस स्टेशन पहुंचे तो पुलिस ने उनसे बदतमीजी से बात की और कहा कि वो खुद जहीर को मार कर आरोप पुलिस पर थोप रहे हैं.

कई मामलों में सामने आया कि परिजनों को डराने के लिए पुलिस ने उनके द्वारा शिकायत करने पर उलटे उन्हीं पर केस बना दिया. इस बारे में आगे विस्तार से चर्चा की गई है. मोहसिन के भाई इमरान पर पुलिस ने काउंटर केस कर दिया. अब जब भी परिजन मोहसिन के मामले के बारे में पूछताछ करने ब्रह्मपुरी पुलिस स्टेशन जाते हैं तो पुलिस उनसे पहले बड़े भाई इमरान को भेजने के लिए कहती है.

गिरफ्तारी के मामलों में परिजनों को उनसे मिलने नहीं दिया गया. बहुत से मामले ऐसे भी सामने आए जहां परिजनों को गिरफ्तारी की खबर कई दिनों बाद दी गई.

संभल में अहमद (बदला हुआ नाम) के मामले में पुलिस ने परिजनों को उससे मिलने की इजाजत नहीं दी. परिजनों का कहना है कि उन्हें डराया गया. शहरोज नामक एक अन्य युवक की संभल में पुलिस फायरिंग में मौत हो गई. एक जनवरी को शहरोज के घर क्राइम ब्रांच के अधिकारी पहुंचे. पुलिस ने उन्हें एक तस्वीर दिखाई जिसमें शहरोज को बाइक पर दो युवक अस्पताल ले जा रहे थे. पुलिस ने उनकी पहचान करने के लिए कहा. शहरोज ने पिता ने कहा कि वो दोनों युवकों की पहचान नहीं कर सके.

तथ्य जांच टीम ने पाया कि पुलिस शहरोज के घर उसकी मौत की जांच करने के लिए नहीं बल्कि परिजनों को डराने के मकसद से आई थी. टीम का मानना है कि जिस तरह से संभल में पुलिस की जांच जारी है ऐसे में संभव है कि उन युवकों पर ही शहरोज की मौत का इल्जाम डाल दिया जाए.

जांच में कमियां

परिजनों को डराने के साथ ही उन्हें कानूनी प्रक्रिया का सहारा लेने से भी रोका गया. बिना न्यायिक प्रक्रिया का पालन करते हुए एफआईआर दर्ज की गई और फिर गिरफ्तारी हुई. तथ्य बताते हैं कि पुलिस ने अलग-अलग तरीके से जांच में समझौता किया.

- *एफआईआर दर्ज नहीं करना या तथ्यों के हेरफेर के साथ एफआईआर दर्ज करना*

पुलिस ने परिजनों को एफआईआर दर्ज कराने से रोकने की हरसंभव कोशिश की लेकिन जहां परिजन हिम्मत दिखाते हुए एफआईआर दर्ज कराने में कामयाब हुए उन मामलों में पुलिस ने अधिकारियों का बचाव करने के लिए तथ्यों के

साथ छेड़छाड की. सोहेल का मामला इसका मार्मिक उदाहण है.

गले में गोली लगने की वजह से सोहेल (बदला हुआ नाम) की मौत हो गई. उसके परिवार ने घटना के तुरंत बाद मामले को दर्ज नहीं कराया. उन्हें डर था कि पुलिस उन्हें नुकसान पहुंचा सकती है या गिरफ्तार कर सकती है. हालांकि आखिरकार उन्होंने मामला पुलिस में दर्ज कराया. तथ्य जांच टीम को परिवार से प्राथमिकी की एक प्रति मिली है. परिवार ने दर्ज कराया कि पुलिस जब प्रदर्शनकारियों पर फायरिंग कर रही थी उस समय सोहेल वहां से गुजर रहा था. उसी दौरान सोहेल को गोली लगी. हालांकि पुलिस ने दबाव बनाया कि वो रिपोर्ट बदल दें. उन्होंने कहा, "गवाह कहां से लाओगे?" तो पुलिस ने एक अलग रिपोर्ट टाइप की, जहां आरोप फिर से एक अज्ञात उपद्रवी पर डाल दिया गया और घटना का ब्यौरा भी छोटा कर दिया गया.

20 तारीख को हुई पुलिस फायरिंग में बिलाल और शहरोज मारे गए थे. बिलाल के परिवार ने 20 की शाम को शिकायत दर्ज कराई. उन्होंने कहा कि बिलाल काम से मुरादाबाद जा रहा था जब पुलिस ने उसे मारने के इरादे से उस पर गोली चलाई. परिवार के पास शिकायत की स्टैंप लगी प्रति है, इसके बावजूद पुलिस ने उसी मामले में एक अन्य एफआईआर दर्ज की. इस एफआईआर में पुलिस ने लिखा कि बिलाल की मौत किसी भारी चीज से घायल होने के बाद हुई. एफआईआर में गोली लगने और उससे हुए मौत का कहीं भी जिक्र नहीं किया गया. इसी तरह शहरोज के परिवारवालों ने भी गोली लगने की बात कहते हुए शिकायत दर्ज कराई. पर पुलिस ने एफआईआर में कहा कि उसकी मौत पत्थराव के कारण हुई. इस तरह पुलिस तमाम आरोपों और जिम्मेदारी से पूरी तरह बच निकली.

फिरोजाबाद में भी पुलिस का यही रवैया रहा, जहां उसने पीड़ित राशिद के घरवालों की शिकायत को कोई अहमियत नहीं दी. बाद में पुलिस ने घरवालों को बुलाया और कहा कि बयान बदलने के बाद ही उनकी एफआईआर दर्ज की जाएगी. यहां पुलिस ने बदले हुए बयान के साथ एक वीडियो बनाने की भी मांग की, पर उन्होंने पुलिस की मांग पूरी करने से साफ मना कर दिया. बाद में घरवालों ने एक वकील की मदद से ऑनलाइन एफआईआर दर्ज कराई. पुलिस की ओर से राशिद के घरवालों को एफआईआर और पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट की कॉपी नहीं दी गई है.

- फॉरेंसिक सबूतों को खत्म किया

20 को हुई हिंसा के बाद उत्तर प्रदेश डीजीपी ओपी सिंह ने दावा किया कि "सभी मौतें क्रॉस फायरिंग में हुई हैं. ये बात पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट में भी साफ हो जाएगी." इस बयान की विडम्बना ये है कि उत्तर प्रदेश प्रशासन की ओर से चिकित्सा की नयायिक प्रक्रिया में भारी अनदेखी देखने को मिली. फॉरेंसिक सबूत इकट्ठा करने में भी लापहवाही की गई. मेरठ में पुलिस ने मोहसिन का पोस्टमॉर्टम किया लेकिन उसकी कॉपी कभी घर वालों को नहीं दी. मोहसिन का शरीर अगले दिन सुबह 6 बजे घरवालों को सौंपा गया. करीबन 20-50 पुलिस जीप के काफिले में मोहसिन का शव आया और पुलिस ने हर मामले की तरह यहां भी परिवार पर शव को तुंरत दफनाने का दबाव बनाया.

अधिकतर मामलों में जहां चिकित्सकीय न्यायिक प्रक्रिया की अनदेखी हुई, वहीं शायद ही ऐसा कोई मामला सामने आया जहां फॉरेंसिक सबूत

इकट्ठा किए गए. मेडिको लीगल सर्टीफिकेट (एमएलसी) का इस्तेमाल भी पुलिस ने लोगों के खिलाफ किया. तथ्य जांच रिपोर्ट में रेखांकित किसी भी पीड़ित के परिवार को पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट नहीं दी गई.

मेरठ में इसी तरह का एक और मामला सामने आया. नियमानुसार यहां पोस्टमॉर्टम के दौरान परिवार से एक सदस्य मौजूद था. परिजन ने मुताबिक पोस्टमॉर्टम ठीक से नहीं किया गया और गोली लगने के विवरण को हटा दिया गया. तोड़-मरोड़ कर लिखी गई एफआईआर वाले मामलों में पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट, एमएलसी अहम होते हैं. इनकी मदद से पुलिस की ओर से की गई हिंसा और लापरवाही को रेखांकित किया जा सकता है.

मुजफ्फरनगर पर तथ्य जांच रिपोर्ट के मुताबिक "गिरफ्तार किए गए लोगों पर कई आपराधिक आरोप लगाए गए हैं. पर सबूतों के अभाव में इनसे बाहर निकलना मुश्किल होगा. पीड़ित व्यक्ति खुद अस्पताल से अपना एमएलसी नहीं बनावा सकता. इलाज के लिए उनके सामने शर्त रखी जाती कि वो लिखित में दें कि वो किसी दुर्घटना में घायल हुए. ऐसे में झूठी एफआईआर और मेडिकल रिपोर्ट तैयार की गई."

- *काउंटर केस बनाए गए*

इन मामलों में पुलिस ने प्रदर्शनकारियों से निपटने के लिए उनके खिलाफ आईपीसी की धारा 307, हत्या की कोशिश (यहां पुलिस की हत्या का आरोप) के तहत केस दर्ज किया. धारा 307 गैर जमानती अपराध है. इसके तहत 10 साल की कैद और जर्माना हो सकता है. स्थिति अनुसार उम्र कैद की सजा भी हो सकती है.

उत्तर प्रदेश के नगीना में पुलिस ने 83 लोगों के खिलाफ आईपीसी की 15 धाराओं के तहत सामूहिक एफआईआर दर्ज की, जिसमें धारा 307 भी शामिल है. पुलिस ने अपनी कार्रवाई को जायज ठहराने के लिए सारा आरोप कथित जानलेवा भीड़ पर डाल दिया. वहीं मानव अधिकार कार्यकर्ताओं, प्रदर्शन की जगहों से गिरफ्तार किए गए लोगों, मृत लोगों और एफआईआर करने की मांग कर रहे परिजनों के खिलाफ काउंटर केस दाखिल किए गए.

लखनऊ में पुलिस ने मानव अधिकार कार्यकर्ता सदफ़ जफ़र और 33 अन्य के खिलाफ 18 अपराधों के तहत आरोप तय किए गए. इसमें धारा 147 (दंगा), 148 (घातक हथियार के साथ दंगा करना), 152 (सरकारी कर्मी पर हमला), 307 (हत्या की कोशिश), 323 (हिंसक रूप से नुकसान पहुंचाना), 506 (आपराधिक धमकी), 435 (आग या विस्फोटक पदार्थ से नुकसान पहुंचाना), 436 (घर को नुकसान पहुंचाने के इरादे से आग या विस्फोटक पदार्थ का इस्तेमाल) और 120बी (आपराधिक साजिश में शामिल होना) जैसे गैर जमानती अपराध शामिल हैं.

मेरठ में मोहसिन के घरवालों ने पुलिस की गोली से हुई मौत की रिपोर्ट दर्ज कराई थी, जिसकी प्रति अब तक घरवालों को नहीं मिली है. वहीं परिवार के एक सदस्य पर कार्रवाई करते हुए आईपीसी की धारा 147, 148, 149, 307, 332, 153, 188, 336, 342, 427, 109, 34 और लोक संपत्ति नुकसान निवारण अधिनियम, 1984 की धारा 3 और 4 के तहत एफआईआर दर्ज की.

मेरठ में छह मौतें आधिकारिक तौर पर दर्ज हुई हैं. इनमें से तीन मृत लोगों के खिलाफ पुलिस ने हिंसा और दंगा करने के आरोप में एफआईआर दर्ज की है.

कस्टडी में यौन हिंसा और टॉर्चर

हिरासत के दौरान व्यवहार पर ट्रिब्यूनल में सदफ़ जफ़र का बयान

पुलिस स्टेशन पहुंचते ही मुझे हिरासत में लिए गए अन्य पुरूषों से अलग कर दिया गया. पुरूषों को जहां रखा गया था वहां से मुझे लगातार चीखने, बेइज्जत करने और मारने की आवाजें आ रही थीं. इसके बाद एक अधिकारी मेरे पास आया और मेरा नाम पूछा, मैंने कहा सदफ़ जफ़र. उस रात मैंने जाना कि एक सामाजिक कार्यकर्ता, रंगकर्मी समेत अन्य बातों के बावजूद मेरा मुस्लिम होना सबसे पहली बात है जो मेरी पहचान से जोड़ा जाता है.

वो मुझसे कहने लगे कि हमने तुम्हारे लिया क्या कुछ नहीं किया. तुम यहां रहते हो, खाते हो, बच्चे हैं. वहां मौजूद महिला अधिकारी जिस तरह मुझसे बात कर रही थीं मुझे आश्चर्य हुआ कि एक औरत दूसरी औरत से इस तरह कैसे बात कर सकती है. ये तो साफ था कि जो अधिकारी प्रदर्शन की जगहों से लौट रहे थे वो काफी गुस्से में थे. वो लगातार मुझे धक्का देते रहते थप्पड़ मारते. एक अधिकारी ने मुझे थप्पड़ मारने की कोशिश की पर मैंने चेहरे पर हाथ रखकर खुद को बचा लिया. उसके बाद उन्होंने मुझे नाखून से नौचा और मेरे बाल खींचे. किसी भी अधिकारी ने नेम प्लेट नहीं पहनी थी तो मुझे किसी का भी नाम नहीं पता है.

जैसे रात होने लगी, मुझे डर लगने लगा कि मेरे बच्चे मुझे ढूंढ रहे होंगे और मेरी सुरक्षा की चिंता होगी. फोन करने का कानूनी अधिकार मुझसे ले लिया गया और इसलिए मैं अपने बच्चों को अपनी गिरफ्तारी की खबर नहीं दे पाई. फिर मुझे बताया गया कि आईजी मेरे बारे में पूछ रहे हैं, जैसे ही मुझे उनके पास ले जाया गया मुझे शब्दों से अपमानित किया गया. उन्होंने पूछा, "तुम्हें सीएए के बारे में क्या पता है. तुम बस योगी और मोदी के खिलाफ खड़े होना चाहते हो. तुम पाकिस्तानी आखिर चाहते क्या हो? तुम यहां क्यों रहते हो, तुम वहीं क्यों नहीं चले जाते हो?"

कमरे में मौजूद एक वरिष्ठ पुरूष कॉन्स्टेबल ने कहा, "हमें तुम पर 307 लगानी चाहिए और तुम्हें जेल में सड़ने के लिए छोड़ देना चाहिए." उसने मुझे एक महिला कॉन्स्टेबल से थप्पड़ मारने के लिए कहा, जो उसने किया. पर वो कॉन्स्टेबल इससे संतुष्ट नहीं हुआ, वो मेरे पास आया, मुझे मेरे बालों से खींचा, मेरे पेट और घुटनों में लात मारी.

मुझे अब वहां कोई उम्मीद नजर नहीं आई. इसके बाद मैं अपनी पहली वाली जगह वापस आ गई. मुझे 24 घंटों तक खाना-पानी नहीं दिया गया. जेल पहुंचने के बाद ही ये सब मिला. उन्होंने बस नाममात्र के लिए मेडिकल चेकअप किया, मेरा बीपी बढ़ा हुआ था तो एक इंजेक्शन दिया और जाने के लिए कह दिया. मेरे पीरियड्स चल रहे थ, मेरा पजामा खून से सन गया. लेकिन उन्होंने मुझे केवल एक न्यूजपेपर दिया ताकि उनकी कुर्सी और कार की सीट ना गंदी हो.

मेरे मित्र और दूसरे लोगों को जेल में मेरी आखों के सामने नंगा कर दिया गया. मैंने उनसे गुजारिश की कि मुझे कहीं और बैठने दिया जाए. मैंने उस समय बहुत अमानवीय और अपमानित महसूस किया. उस समय जाकर उन्होंने मुझे सैनिटरी पैड दिया. तब तक मैं खून से सन चुकी थी. दो दिन तक मैं उन्हीं कपड़ों में थी, जिसके बाद मेरे कपड़े मुझ तक पहुंचे. जेल में बिताए वो 19 दिन मेरे लिए राहत की बात थे क्योंकि 19 और 20 के बीच की रात मैंने कंसंट्रेशन कैंप में बिताई थी.

डी.के. बासू बनाम पश्चिम बंगाल राज्य मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा, "इस बात में संदेह नहीं कि न्यायिक कर्तव्य के तहत पुलिस के पास किसी भी अपराधी को गिरफ्तार करने और पूछताछ करने का पूरा अधिकार है पर उन्हें याद रखना चाहिए कि पूछताछ और जांच के लिए कानून आरोपी को थर्ड-डिग्री टॉर्चर का अधिकार नहीं देता है."

शकीला अब्दुल गफ्फार बनाम वसंत रघुनाथ डोभले के मामले में कोर्ट ने कहा कि "कस्टडी में हिंसा, टॉर्चर और पुलिस शक्ति का गलत इस्तेमाल केवल इस देश तक सीमित नहीं है. ये हर जगह हो रहा है. ये अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समूहों की चिंता का विषय है."

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा 1948 का अनुच्छेद पांच कहता है कि किसी के साथ भी टॉर्चर नहीं होना चाहिए. लोगों के साथ अमानवीय या दोयम दर्जे का व्यवहार या सजा नहीं मिलनी चाहिए.

हर सभ्य देश इस पर अपनी चिंता जाहिर करता है और इस दिशा में कानून बनाने की कोशिश करता है लेकिन फिर भी इस तरह की हिंसा थमने का नाम नहीं ले रही है.

टॉर्चर और अमानवीय व्यवहार या सजा के खिलाफ 1984 की घोषणा के हस्ताक्षरकर्ताओं में भारत भी शामिल था, हालांकि इसकी पुष्टि होना बाकी है. भारत का संविधान अनुच्छेद 21 के तहत प्रत्येक नागरिक को "जीने का अधिकार" देता है. इसके मुताबिक प्रत्येक व्यक्ति समान व्यवहार का अधिकारी है और इसमें प्रताड़ना को निषेध घोषित किया गया है.

इन तमाम फैसलों, घोषणाओं और अधिकारों के बाद भी उत्तर प्रदेश पुलिस ने व्यसकों समेत बच्चों तक को शारीरिक, यौन और मानसिक रूप से प्रताड़ित किया.

फिरोजाबाद में अलग-अलग जगहों से पुलिस लोगों को गिरफ्तार कर रसूलपुर पुलिस स्टेशन लाई, जहां से उन्हें माखनपुर पुलिस स्टेशन भेज दिया गया. इन दोनों ही स्टेशनों में उन्हें मारा गया. आमिर नामक युवक को पुलिस ने इतनी बेरहमी से पीटा की उसको कई आंतरिक चोट आईं. इसके बावजूद पुलिस ने इलाज करने से इनकार कर दिया. आमिर प्रदर्शन का हिस्सा नहीं था. इन सब बातों के बाद भी पुलिस नहीं रुकी और उसे प्रताड़ित किया. मेरठ में भी पुलिस ने ऐसे ही 100 लोगों को गिरफ्तार किया और अब भी रात में मुस्लिम बहुल इलाकों में गस्त लगाकर लोगों को डराने की कोशिश करती है. पुलिस और लोगों को गिरफ्तार करने की धमकी भी देती है.

जमील (नाबालिग, बदला हुआ नाम) ने बताया कि पुलिस ने कुर्ता-पजामा पहने और दाढ़ी वाले लोगों को अलग से पहचान कर प्रताड़ित किया. दानिश (नाबालिग, बदला हुआ नाम) ने बताया कि पुलिस ने उसे मीनाक्षी चौके से जबरन उठा लिया. दानिश को कथित रूप से घूस लेने के बाद पुलिस ने दो दिन बाद छोड़ा. दानिश ने बताया कि पुलिस की मर्जी से थाने में कुछ 4-6 लोग रात के समय दाखिल होते थे. वो सभी नकाबपोश थे और जब तक वो थक नहीं जाते थे तब तक लोगों को पीटते रहते थे. नाबालिग ने बताया कि जब प्रियंका गांधी के दौरे की खबर फैली तब जाकर इन लोगों को रिहा किया गया. खबर के मिलते ही

पुलिस ने बिना प्रक्रिया का पालन करे इन लोगों को छोड़ा दिया. पुलिस ने घरवालों को बुलाकर उन्हें सौंपने के प्रोटोकॉल तक को नहीं पूरा किया. पुलिस कस्टडी में पुलिस ने पिस्तौल पर उन लोगों की ऊंगलियों के जबरन निशान लिए अगर वो ऐसा करने से इनकार करते तो उन्हें और ज्यादा पीटा जाता था.

पूर्व आईपीएस अधिकारी एसआर दारापुरी को पुलिस ने लखनऊ में हिरासत में रखा. उन्होंने बताया कि पुलिस ने उन्हें न्यायिक अधिकार से वंचित रखा.

जब उन्होंने मुझे पूरी रात पुलिस स्टेशन में ही रखा, तो मैंने उनसे कंबल मांगा, पर उन्होंने देने से इनकार कर दिया. जब मुझे रिमांड के लिए मजिस्ट्रेट के पास ले जाया गया तो मैंने अपने वकील को फोन करने की मांग की. पुलिस ने ये कहते हुए इनकार कर दिया कि मुझे अपने वकील को फोन करने का अधिकार नहीं है. मैंने उन्हें याद दिलाया कि मेरी गिरफ्तारी के बाद से लिखित में मेरा बयान दर्ज नहीं किया गया है तो पुलिस ने कहा इसकी जरूरत नहीं है क्योंकि वो पहले ही दर्ज कर चुके हैं.

पुलिस स्टेशन में तीन दिन कस्टडी के दौरान मुझे खाना नहीं दिया गया. इसके बाद मुझे जेल में ट्रांसफर कर दिया गया. मुझे पता चला कि मुझसे पहले गिरफ्तार किए गए लोगों को बुरी तरह से पीटा गया है. मैंने देखा कि मुस्लिमों को उससे भी भयानक तरीके से पीटा गया है. मेरी ही तरह दूसरे लोगों के भी खाना-पानी, कंबल देने, फोन करने के अधिकारों का हनन हुआ. मेरे जैसे 32 वर्षीय आईपीएस अधिकारी के साथ जब सरकार का ये व्यवहार रहा तो इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है आम नागिरकों के साथ कैसा व्यवहार किया गया है.

कस्टडी में लोग पुलिस के दमन का शिकार हुए लेकिन बुरी तरह घायलों को भी मेडिकल सुविधाओं से वंचित रखा गया. बीमार होने के बाद भी इकबाल (बदला हुआ नाम) को पीटा गया. तीन दिन बाद ही उसे मेडिकल विभाग में सिफ्ट किया गया. वहां उसे केवल पेनकिलर दी गईं. उसके परिजन इसके खिलाफ कोर्ट पहुंचे जहां कोर्ट ने उनके पक्ष में फैसला दिया. इसके बावजूद पुलिस ने परिजनों को इकबाल को अस्पताल ले जाने से इनकार कर दिया. कोर्ट की तीसरे आदेश और मीडिया के दबाव के बाद ही पुलिस ने इकबाल को आगरा मेडिकल कॉलेज में भर्ती किया.

नवशरण सिंह ने पुष्टि की कि हिरासत में लिए गए लोगों का सेक्सुअल टॉर्चर भी हुआ. उन्होंने बताया कि बहुत दर्द देने और समुदाय को नीचा दिखाने के लिए सेक्सुअल टॉर्चर को हथियार बनाया जाता है.

संभल में एक युवक केवल इसलिए पुलिसिया जुल्म का शिकार हुआ क्योंकि उन्हें पता चला कि वो जामिया विश्वविद्यालय का छात्र है. पुलिस ने उसे नंगा करके बेल्ट और डंडों से मारा. पुलिस ने उसके नाजुक अंगों जैसे गुप्तांगों पर अधिक वार किया. उसकी बहन ने बताया कि जब वो उससे मिलने थाने पहुंची तो उसके भाई ने उससे नजरे नहीं मिलाई.

फिरोजाबाद में नबी अहमद नामक युवक को गिरफ्तार किया गया. जब अहमद का परिवार उससे मिलने पहुंचा तो उसने बताया कि रसूलपुर थाने में उसके यौनांग को बेरहमी से दबाया गया.

अहमद ने अपने भाई को बताया कि रात में पुलिस दूसरे लोगों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव करती है. इन लोगों की चीखे इतनी तेज होती थी कि वो पूरे इलाके में सुनी जाती थीं.

कस्टडी के दौरान इन लोगों को नंगा रखा जाता था जैसे कि ये कोई नियम हो. यौनांग में वार करने की यही प्रवृति दूसरे शहरों में भी दिखी. संभल में गिरफ्तार किए गए सभी 54 लोगों को पुलिस ने 130 किमी. दूर बरेली की जेल में सिफ्ट कर दिया. एक स्थानीय वकील ने कहा कि मुझे ये जान कर राहत मिली कि उन युवकों को बरेली भेज दिया गया क्योंकि इससे वो यहां रेप होने से बच गए. संभल की स्थानीय जेल रेप की घटनाओं के लिए बदनाम है.

तथ्य जांच टीम के सामने तीन ऐसे मामले आए जहां परिजनों ने उन्हें बताया कि उनके लोगों को गोली लगने के बाद अस्पताल में लाया गया. यहां उनके शरीर से कपड़े तो हटा दिए गए लेकिन उन्हें अस्पताल की ओर से दूसरे कपड़े नहीं दिए गए. साथ ही घरवालों को भी शरीर ढकने से इनकार कर दिया गया. इस तरह का व्यवहार यौन रूप से अपमानित करने और समुदाय को नीचा दिखाने के लिए किया गया.फिरोजाबाद में 19 वर्षीय दिहाड़ी मजदूर मुकीम पेट में पुलिस की गोली लगने से घायल हो गया. वो उसे फिरोजाबाद ट्रॉमा सेंटर ले गए जहां से उसे आगरा ट्रांसफर कर दिया गया. आगरा में उसके कपड़े उतार दिए गए लेकिन उसे शरीर ढंकने के लिए कोई दूसरा कपड़ा या कंबल नहीं दिया गया. दादी द्वारा आपत्ति करने पर अस्पताल के स्टाफ ने कहा कि सबको पता चलने दीजिए कि मरीज कौन है. परिवार ने स्टाफ से लगातार विनती की कि मुकीम के शरीर को ढका जाए लेकिन जब तक वो वहां था उसकी मदद नहीं की गई.

मोहम्मद सफीक को कान के पास गोली लगी थी. छह दिन तक तमाम जिला अस्पतालों में उसे नंगा रखा गया और ढंकने के लिए कुछ भी नहीं दिया गया. छह दिन बाद घायल सफीक की मौत हो गई. जब सफीक को दिल्ली लाया गया तो यहां उनकी पत्नी ने अपनी 16 वर्षीय बच्ची से कहा कि "अपने अबु के लिए एक कंबल लाना वो यहां नंगा पड़े हैं."

हारून की भी कुछ ऐसी ही कहानी है. उसे एक अस्पताल से दूसरे अस्पताल में ट्रांसफर किया गया लेकिन इस दौरान उसका शरीर नंगा ही रहा. अंततः छह दिन बाद उसकी मौत हो गई.

हिंसा का शिकार हुए इन लोगों को बिना किसी अपराध बोध के जबरन नंगा रखा गया. ये जिनेवा संधि का उल्लंघन है.

ये भी सामने आया कि बच्चों को गिरफ्तार करते समय उनकी आयु दर्ज नहीं की गई ऐसे में जुवेनाइल जस्टिस एक्ट के तहत उनके अधिकारों से उन्हें वंचित रखा गया.

नाबालिगों के साथ बेरहम व्यवहार

मुजफ्फरनगर में मदीना चौक के पास तथ्य जांच टीम जमील (बदला हुआ नाम) और उसके परिवार से मिली. 14 वर्षीय जमील 20 दिसंबर की रोज नमाज पढ़कर मस्जिद से अपने छोटे भाई को प्रदर्शनकारियों की भीड़ में ढूंढने निकला था. पुलिस ने इस दौरान उसे हिरासत में लेकर बेरहमी से पीटा. परिजनों को बिना सूचित किए गैर कानूनी तरीके से उसे तीन दिन तक हिरासत में रखा गया.

उसे बेरहमी से पीटने के बाद पुलिस के कुछ अधिकारियों ने उसे जलाने तक की बात की लेकिन अन्य सहयोगियों ने उन्हें ऐसा करने से रोका. हालांकि वो बस इतने पर ही नहीं रुके उन्होंने जमील के हाथ को गर्म सरीए से जलाया. पुलिस ने उस पर दबाव बनाया कि वो कम से कम 100 लोगों के नाम बताए. उसने बताया कि कुर्ता पजामा और दाड़ी वाले लोगों को पुलिस ने बुरी तरह पीटा. इस दौरान पुलिस वालों ने लगातार ताने मारे कि "तुम्हारे अल्लाह बचाने आएंगे क्या?"

आखिरकार जब उसके परिवालों को उसे लेने के लिए बुलाया गया तो पुलिस ने उनसे कहा, "पैदा करके छोड़े दिए हो हमारे गाड़ी जलाने?" उन्होंने उसे रिहा करने से पहले रुपये की भी मांग की पर उन्होंने कहा कि उनके पास रुपये नहीं हैं. पुलिस ने उनके एक परिवार के सदस्य से कागज़ पर हस्ताक्षर भी कराए. इस कागज में लिखी बातों की उन्हें आज तक कोई जानकारी नहीं है.

परिवार ने जमील की खून से सनी शर्ट भी हमें दिखाई. उन्होंने कहा, "तकरीर किए तो फसादी कहे, तकरार किए तो जिहादी... और जो आरक्षण के खिलाफ तोड़फोड़ किए, क्या उनको आतंकवादी कहे."

जुवेनाइल जस्टिस एक्ट के मुताबिक नौजवान युवक को गिरफ्तार करने के बाद आयु को प्रमाणित किया जाता है. इन तमाम मामलों में एक भी ऐसा मामला सामने नहीं आया जहां व्यक्ति को स्पेशल जुवेनाइल पुलिस यूनिट के पास भेजा गया.

यहां राज्य प्रशासन स्थानीय अधिकारियों को जानकारी ना होने का हवाला देकर बच नहीं सकते हैं. यह पूरी तरह राज्य की जिम्मेदारी है कि वो अपने अधिकारियों को पूरी ट्रेनिंग दे. साथ ही प्रशासन की ओर से गलती करने वाले बच्चों के मामलों में जिला बाल संरक्षण इकाई, बाल कल्याण समितियां या जुवेनाइल जस्टिस बोर्ड से जांच में शामिल होने की मांग नहीं की गई.

अधिकतर मामलों में पुलिस ने बच्चों को बड़े लोगों के साथ ही हिरसात में रखा. इन बच्चों को रात भर से लेकर 24 घंटे से अधिक समय तक गैर कानूनी रूप से हिरासत में रखा गया. अन्य लोगों की तरह ये बच्चे भी उत्पीड़न और अत्याचार का शिकार हुए. प्रशासन ने कई मामलों में परिजनों को उनके घरवालों के बारे में ठीक-ठीक जानकारी देने में लापरवाही की. ऐसे

में इनके परिजनों को एक थाने से दूसरे थाने में चक्कर लगाने पड़ते थे.

इन मामलों में जुवेनाइल जस्टिस एक्ट की सबसे अहम और आधारभूत बातों का उल्लंघन हुआ.

राशिद को गिरफ्तारी के बाद पहले मुरादाबाद से चंदौसी भेजा गया जहां से आखिरकार उसे बरेली संट्रेल जेल भेज दिया गया. 17 वर्षीय राशिद दिहाड़ी मजदूर है. बरेली स्थित जेल में राशिद से मिलने गए एक परिजन ने तथ्य जांच टीम को बताया कि जेल में करीबन 43 नाबालिग गिरफ्तार कर रखे गए थे. पुलिस ने बाद में सभी हिंदू बच्चों को छोड़ दिया जबकि मुस्लिम बच्चों को रिहा नहीं किया.

पुलिस ने बच्चों को मौखिक, शारीरिक और लैंगिक तौर पर प्रताड़ित किया. परिजनों ने टीम को बताया कि उनके पास उम्र का प्रमाण भी मौजूद है पर पुलिस अधिकारी से जिला मजिस्ट्रेट तक ने इन मामलों में आधारभूत कानून का उल्लंघन किया. इसका सीधा अर्थ ये है कि पुलिस ने अब भी कई नाबालिगों को हिरासत में रखा है.

जेजेए, 2000 और इसमें बाद में किए गए संशोधन भारत के बच्चों से किया गया एक वादा है कि बाल अधिकारों पर कन्वेंशन के सिद्धांतों और मूल्यों को देश में लागू किया जाएगा. भारत ने इस घोषणा पर केवल हस्ताक्षर ही नहीं किए हैं बल्कि आधिकारिक तौर पर घोषणा भी की है. ऐसे में भारत इस घोषणा के सिद्धांतों का पालन करने के लिए प्रतिबद्ध है. 2015 के कानून की प्रस्तावना सीआरसी 1990, बीजिंग रूल्स 1985 और रियाद रूल्स 1990 का आह्वान करती है.

ये सभी प्रस्ताव बच्चों के लिए सुरक्षित माहौल सुनिश्चित करते हैं, जहां सही प्रकार से उनका पुनर्वास हो और उनके साथ निंदनीय व्यवहार ना किया जाए.

20 दिसंबर 2019 को आरिफ (बदला हुआ नाम) समेत कई नाबालिगों को पुलिस ने दंगा और आगजनी की आरोप में गिरफ्तार कर लिया. आरिफ की उम्र 15 साल है और वो एक दिहाड़ी मजदूर का बेटा है. इसके बाद पास के कोतवाली स्टेशन पहुंचे उनके माता पिता से पुलिस ने सीधे मुंह बात नहीं की. पुलिस ने ये तक कहा कि "ये बच्चे कम उम्र के शैतान हैं जिनको उपद्रव करने के लिए बड़ा किया गया है." लगभग एक हफ्ते की प्रताड़ना के बाद इन बच्चों को परिवार से मिलने की इजाजत दी गई. आरिफ ने फैक्ट फाइंडिंग टीम के सामने अपनी आपबीती बताते हुए कहा कि उन्हें मारापीटा गया लेकिन व्यसकों को पुलिस ने बहुत बेरहमी से पीटा. इस दौरान उन्हें लगातार गालियां दी जाती थीं. ये रिपोर्ट लिखने तक स्पष्ट नहीं है कि आरिफ को जमानत मिला या वो अब भी कस्टडी में है.

इस तरह की घटनाओं में अगर प्रशासन बच्चों के अधिकारों को सुरक्षित करने में विफल रहता है तो बाल कल्याण समितियां और जुवेनाइल जस्टिस बोर्ड अपने स्तर पर स्वतः संज्ञान ले सकते हैं. हालांकि उत्तर प्रदेश में ये संस्थाएं चुप रहीं. जिला स्तर पर तो प्रशासन और इन संस्थाओं की ये नाकामी सामने आई ही, लेकिन उत्तर प्रदेश राज्य बाल संरक्षण आयोग और राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग जैसी प्रमुख संस्थाएं भी मुंह पर ताला लगाए बैठे रहीं. मीडिया तक में गैर-कानूनी रूप से बच्चों को गिरफ्तार करने की खबरें चलीं. इन सब के बावजूद इन संस्थाओं ने एक बयान तक जारी नहीं किया.

Watch:
https://www.youtube.com/watch?v=qR4sEnLCr5s

सुरूर मंदर ने कहा कि "प्रदर्शनकारी पुलिस से रहम या मानवता की उम्मीद नहीं कर रहे थे वो बस उनसे संविधान और कानून के दायरे में अपना कर्तव्य पूरा करने की उम्मीद कर रहे थे." इस रिपोर्ट में आगे इस प्रकार की हिंसा के मौजूदा और भविष्य में होने वाले प्रभावों पर विस्तार से चर्चा की गई है. लेकिन हमें याद रखना होगा कि बच्चों पर की गई इस तरह की प्रताड़ना से वो जख्म बनेंगे जो शायद ही कभी भर पाएं. इसमें से बहुत से बच्चे अब भी पुलिस कस्टडी में हैं.

बदले की भावना से भरा प्रशासन: उच्च पदाधिकारियों की भूमिका

उत्तर प्रदेश में हुई घटनाएं बताती हैं कि अधिकारी वर्ग सांप्रदायिक दुर्व्यवहार की भावन से भरा हुआ है. राज्य के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ और सत्तारूढ़ पार्टी के अन्य नेताओं ने सांप्रदायिक और नफरत भरी बयानबाजी से मुस्लिमों के खिलाफ नफरत और हिंसा के माहौल का स्वागत किया है.

19 दिसंबर 2019 में मुख्यमंत्री आदित्यनाथ ने सीएए के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे लोगों से बदला लेने की बात कही. उन्होंने कहा, वीडियो से हिंसा मे संलिप्त लोगों की पहचान की जा रही है. हम उनसे नुकसान के लिए भरपाई करावा कर बदला लेंगे."

सुभाषिनी अली ने सुनवाई के दौरान साफ किया कि मुख्यमंत्री का ये बयान पुलिस और लोगों के बीच बढ़े तनाव से पहले आया था. उनके मुताबिक सीएम ने जो भी कहा प्रशासन ने उससे प्रभावति होकर लोगों के खिलाफ हिंसा की. यही वजह है कि मुजफ्फरनगर में सांसद संजीव बालयान और मेरठ में बीजेपी प्रतिनिधि लक्ष्मीकांत वाजपेयी प्रदर्शन स्थल पर खुद मौजूद दिखे. संभव है कि वो वहां ये सुनिश्चित करने के लिए मौजूद थे कि पुलिस प्रदर्शनकारियों से सही तरीके से निपटे.

पूर्व आईएएस अधिकारी हर्ष मंदर ने पुष्टि की कि इस तरह की स्थितियों से निपटना पूरी तरह से जिला प्रशासन के नियंत्रण में होता है. वो आसानी से हिंसा को होने से रोक सकते हैं. इस मामले में जिला प्रशासन तनाव कम करने में विफल रहा. वहीं ये देखा गया कि उसने इस तरह की चीजों को बढ़ावा दिया जिससे तनाव बढ़ा. न्यूजपेपर में एक घटना का विवरण प्रकाशित हुआ था जहां गोरखपुर में एक मां अपने हिरासत में लिए गए बेटे के बारे में पूछने पहुंची तो एडीएम ने कहा कि "उसे प्रदर्शनस्थल पर होने के लिए गोली मार देनी चाहिए."

मेरठ में स्थानीय लोगों और तथ्य जांच की मुहिम से जुड़े लोगों ने कथित तौर पर बताया कि डीएम ने स्थानीय अस्पतालों को पुलिस की हिंसा का शिकार हुए लोगों को इलाज के लिए भर्ती नहीं करने के निर्देश तक जारी किए. ऐसे में इन मामलों में ऊंचे पदों पर बैठे पदाधिकारिओं की जिम्मेदारी तय की जानी चाहिए.

उत्तर प्रदेश में तथ्य जांच का हिस्सा रहीं प्रख्यात राजनैतिक विश्लेषक निवेदिता मेनन ने कहा, "इस बात में दो राय नहीं कि उत्तर प्रदेश की मुस्लिम जनता बीजेपी सरकार के भयानक तंत्र के हाथों प्रताड़ित हुई."

Watch: https://www.youtube.com/watch?v=fODcgOLvPcc&t=22s

चिकित्सा विभाग की नैतिकता का ख़ात्मा

उत्तर प्रदेश में हुई हिंसा के दौरान पहली बार देखा गया कि चिकित्सा-क़ानून तंत्र पूरी तरह से ध्वस्त हो चुकी है. लगभग हर मामलों में देखा गया कि पुलिस की गोली से घायल लोगों का ईलाज करने से डॉक्टर मना करते रहे और उन्हें एक अस्पताल से दूसरे अस्पताल भेजने का काम करते रहे. पुलिस की हिंसा में मारे गए ज्यादातर लोगों का पोस्टमॉर्टम नहीं किया गया. जिन लोगों का पोस्टमॉर्टम हुआ, उनकी रिपोर्ट परिजनों को नहीं दी गई. इन सभी अत्याचारों को देखकर उत्तर प्रदेश के मुसलमान दहशत और हताशा के माहौल में जी रहे हैं.

आपात चिकित्सा से इनकार

20 दिसंबर को मोहसिन को पुलिस ने गोली मारी. जब परिजनों को इस घटना का पता चला तो वे एम्बुलेन्स बुलाने गए. एम्बुलेन्स वाला अस्पताल जाने से इनकार करने लगा. आखिरकार एम्बुलेन्स वाले ने एक जगह पर मोहसिन और उसके परिवार को ईलाज के लिए पहुंचाया. वहां से इनके साथ पुलिस लग गई. तथ्य जांच टीम को बताया गया कि पहले मोहसिन को संतोष हॉस्पिटल ले जाया गया. वहां डॉक्टरों ने यह कहते हुए ईलाज से इनकार कर दिया कि ऊपर से आदेश है कि पुलिस की गोली से मारे गए लोगों का ईलाज ना करें. इसके बाद मोहसिन को मेडिकल कॉलेज ले जाया गया. यहां डॉक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया. इसके बाद पुलिस ने परिजनों पर दबाव बनाया कि लाश को जल्द से जल्द दफ़नाया जाए. मोहसिन की बहन बाहर थी, वह अपने भाई को अंतिम बार देख भी नहीं सकी. परिजनो को पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट तक नहीं दी गई.

20 दिसंबर को मेरठ के तारापुरी में पुलिस ने 300 मीटर की दूरी से जहीर को गोली मारी. गोली जहीर के आंख में लगी. इसके बाद जब परेशान परिजनों ने 100 नंबर डायल करके घटना के बारे में बताया तो एम्बुलेंस की कोई सुविधा उन्हें नहीं मिली. इसके बाद लोगों ने 112 नंबर पर कॉल किया. वहां से भी कोई सहायता नहीं मिली. इसके बाद परिजनों ने खुद से ही जहीर को लाला लाजपत राय अस्पताल में भर्ती कराया. वहां डॉक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया.

हिंसा के शिकार लोगों को सबसे पहले स्वास्थ्य कार्यकर्ता एम्बुलेंस सेवाओं के लोग ही देखते हैं. यूपी में इस हिंसा के कई मामलों में आपात चिकित्सा से भी इनकार किया गया है. इस तरह से किसी की आपात चिकित्सा से इनकार करना ना सिर्फ अंतरराष्ट्रीय संधि का उल्लंघन है, बल्कि यह भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 और इंडियन मेडिकल काउंसिल, 2002 के नियमों को भी ताक पर रखता है. सुप्रीम कोर्ट के कई फ़ैसलों में भी कहा गया है कि किसी की आपात चिकित्सा से अस्पताल इनकार नहीं कर सकते.

चाहे प्राइवेट हो या सरकारी, सभी डॉक्टरों का कर्तव्य है कि वे आपात स्थिति में आए मरीज का ईलाज प्राथमिकता के साथ करें. सभी डॉक्टर इंडियन मेडिकल काउंसिल एक्ट 1956 के निर्देशों का पालन करने के लिए प्रतिबद्ध होते हैं. इस नियम में कहा गया है कि आपात स्थिति में मरीज की जान बचाना और उन्हें सामान्य हालत

में लाना डॉक्टरों का पहला कर्तव्य है. मरीज की हालत स्थिर हो जाने के बाद डॉक्टर ही चिकित्सीय-क़ानूनी प्रक्रिया को पूरा करेंगे.

सुप्रीम कोर्ट के अनुसार निजी या सरकारी अस्पताल किसी भी व्यक्ति की आपात चिकित्सा से इनकार नहीं कर सकते. जख़्मी लोगों के पास आपात चिकित्सा का अधिकार प्राप्त है. यह अस्पताल प्रबंधन की जिम्मेदारी है कि वह अपने डॉक्टरों से यह सुनिश्चित कराए कि बिना किसी भेदभाव के हर मरीज का ईलाज आपात स्थिति में किया जाएगा.

संभल जिले के सेवा हॉस्पीटल में शेहरोज को ले जाया गया. वहां डॉक्टरों ने ईलाज से इनकार कर दिया और एसियन हॉस्पीटल रेफर किया. एसियन हॉस्पीटल ने बताया कि शेहरोज के पेट में गोली लगी है और खून काफी निकल चुका है इसलिए उसे मुरादाबाद के टीएमयू हॉस्पीटल में भर्ती कराया जाए. मुरादाबाद के रास्ते में ही शेहरोज ने दम तोड़ दिया. रात के 2 बजे उसका अंतिम संस्कार परिजनों ने किया. परिवार को अब तक पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट नहीं दी गई है.

शहर दर शहर तथ्य जांच टीम के लोगों ने हिंसा में मारे गए लोगों के परिजनों से मुलाकात की. लगभग सबका कहना था कि उन्हें ईलाज की सुविधा नहीं मिली. अगर डॉक्टरों ने ईलाज किया होता तो इतनी जानें नहीं गई होतीं.

फिरोजाबाद में तथ्य जांच टीम को पता चला कि वहां के सरकारी मेडिकल कॉलेज ने यह कहते हुए इनकार किया कि उन्हें ऐसा करने के लिए जिला प्रशासन से आदेश आया है. मेडिकल कॉलेज ने मरीजों को आगरा के एसएन मेडिकल कॉलेज रेफर किया. फिर आगरा से उन्हें दिल्ली के एम्स या सफदरजंग अस्पताल रेफर किया गया. ईलाज में देरी की वजह से एम्स और सफदरजंग में तीन लोगों की मौत हो चुकी है.

अपनी ड्यूटी निभाने में फेल स्वास्थ्य कर्मी

गैर-भेदभाव का सिद्धांत कहता है, "रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक मत, राष्ट्रीय या सामाजिक पहचान, संपत्ति, जन्म या अन्य पहचान जैसे कि विकलांगता, उम्र, वैवाहिक या पारिवारिक स्थिति, लैंगिक ऐच्छिकता, स्वास्थ्य स्थिति, आवास या आर्थिक स्थिति के आधार पर बिना भेदभाव किए हर एक नागरिक के मानवाधिकार की रक्षा की जानी चाहिए."

इस सिद्धांत हमारे क़ानून में भी पाया जाता है. यहां हर मरीज को अधिकार है कि वह बिना किसी भेदभाव के अपना ईलाज करा सके. अस्पताल प्रबंधन की जिम्मेदारी है कि वे सुनिश्चित करें कि अस्पताल परिसर के अंदर हर एक मरीज का ईलाज बिना किसी भेदभाव के किया जाएगा. जन-सुनवाई के दौरान डॉ. मैथ्यू वर्गीज़ ने कहा, "स्वास्थ्य कर्मियों की पहली जवाबदेही है कि वे बिना किसी देरी और भेदभाव के अपने मरीजों का ईलाज करे. आपात स्थिति में किसी भी डॉक्टर की सबसे पहली जिम्मेदारी है कि वह मरीज की जान बचाए." उत्तर प्रदेश में इन सभी नियमों की धज्जियां उड़ाई गईं.

परिजनों के अनुसार मुक़ीम काम करके घर लौट रहा था. फिरोजाबाद में पुलिस ने उसके पेट में गोली मार दी. परिवार के लोग मुक़ीम को फ़िरोजाबाद ट्रामा सेंटर लेकर गए. वहां डॉक्टरों ने ईलाज करने की बजाय उसे आगरा रेफर कर दिया. आगरा में भी वह दो दिन तक भर्ती रहा, लेकिन डॉक्टरों ने ध्यान नहीं दिया. परिजनों का कहना है

कि अगर सही समय पर उसका ईलाज किया गया होता तो मुक़ीम आज जिंदा होता. परिवार वालों का कहना है कि 2 दिनों तक वह आगरा में भर्ती रहा, लेकिन डॉक्टरों ने उसका घाव तक भी साफ नहीं किया था. ना ही कोई देखभाल करता था.

परिजनों ने तथ्य जांच टीम को बताया कि आगरा के अस्पताल में मुक़ीम के सारे कपड़े उतार दिए गए थे और एक कम्बल तक उसको नहीं ओढ़या गया था. घाव को प्लास्टिक से ढका गया था. परिवार वालों के दिन में एक बार ही मुक़ीम से मिलाया जाता. जब आगरा से उसे एम्स रेफर किया गया तो पुलिस ने परिवार के किसी को भी एम्बुलेन्स में उसके साथ नहीं बैठने दिया. परिजनों का कहना था कि दिल्ली आने पर ही मुक़ीम का ईलाज शुरू हुआ, लेकिन तब तक काफी देर हो चुकी थी. गोली का इंफेक्शन पूरे शरीर में फैल चुका था. दिल्ली में डॉक्टरों ने बताया कि अगर समय रहते मुक़ीम का ईलाज हुआ होता तो उसकी जान बचाई जा सकती थी. 24 दिसंबर 2019 को मुक़ीम की मौत हो गई, लेकिन अभी तक कोई पोस्ट मॉर्टम रिपोर्ट नहीं मिला. परिजनों का आरोप है कि आज भी पुलिस उनके घर आकर धमकाती है और कई दस्तावेज़ों पर हस्ताक्षर करने का दबाव बनाती है.

मेरठ में तथ्य जांच टीम को बताया गया कि वहां डीएम ने खुद अस्पतालों को निर्देश दे रखा था कि पुलिस की गोली से घायल लोगों का कोई ईलाज नहीं किया जाए. तथ्य जांच टीम से डॉक्टरों ने बताया कि कई घायल लोग अपना ईलाज इसलिए भी नहीं करा पाए कि उन्हें रोकने के लिए भारी संख्या में पुलिस बल अस्पताल परिसर में ही तैनात थे. कई जगहों पर टीम ने पाया कि जो डॉक्टर ईलाज करने को तैयार थे उन्हें प्रशासन-पुलिस की तरफ से धमकाया जाता कि उनका लाइसेंस रद्द कर दिया जाएगा. इस पर डॉ. मैथ्यू वर्गीज़ ने जन-सुनवाई करते हुए कहा कि डॉक्टरों को यह बात मालूम होना चाहिए कि उनके लाइसेंस को रद्द करने का अधिकार सिर्फ नेशनल मेडिकल काउंसिल या स्टेट मेडिकल काउंसिल के पास ही है. इसके अलावा राज्य सरकार का कोई अधिकारी उनका लाइसेंस रद्द नहीं कर सकता. इन सबके बावजूद भी कई मामलों में डॉक्टरों ने खुद सांप्रदायिक भावना से काम किया है. यह तय है कि चाहे कारण जो भी रहा हो, उत्तर प्रदेश में स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों ने आपात चिकित्सा ना देने का अपराध किया है.

मुजफ़्फ़रनगर के दानिश का मामला भी ध्यान देने लायक है. अस्पताल में भर्ती होने के एक दिन बाद जिला प्रशासन ने दानिश के परिजनों को कहा कि उसे ईलाज के लिए मेरठ ले जाया जाए. चूंकि मेरठ में उस समय स्थिति तनावपूर्ण थी और वहां के अस्पताल में कई लोगों के मौत की ख़बर आ रही थी, इसलिए भयभीत परिजनों ने दानिश का ईलाज एक प्राइवेट अस्पताल में कराया. दानिश और उसके परिजनों को सरकार की तरफ से कोई आर्थिक सहायता नहीं मिली और ना ही कोई चिकित्सीय क़ानूनी प्रक्रिया पूरी की गई है.

यह पहले ही कहा जा चुका है कि मृत लोगों के परिजनों को अस्पताल ने ना पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट दिया है ना ही उनके रिकॉर्ड साझा किया गया है. डॉ. मैथ्यू वर्गीज़ ने कहा कि अस्पताल में भर्ती हर एक मरीज के परिजनों को अधिकार है कि पोस्ट मॉर्टम रिपोर्ट या फिर मरीज के स्वास्थ्य से जुड़े रिपोर्ट प्राप्त कर सकें.

उत्तर प्रदेश में पुलिस की हिंसा के अधिकतर मामलों में हमने देखा कि मृतक के परिजनों को पोस्ट मॉर्टम रिपोर्ट नहीं मिला है. सुभासिनी अली ने गवाही दी कि जिन तीन परिवारों को पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट मिली उसमें मौत का कारण "गोली के जख़्म" को बताया गया है. इसके अलावे कोई जानकारी परिवार को नहीं दी गई है. इसका नुक़सान यह है कि जिन लोगों की भी मौत हुई है उन्हें सरकार की तरफ से कोई मुआवज़ा नहीं मिल सकेगा. इसके साथ ही सबूत के अभाव में परिजन पुलिस के ख़िलाफ़ केस भी दर्ज नहीं करा पाएंगे.

नूर मोहम्मद के परिवार वालों ने बताया कि नूर का पोस्टमॉर्टम भी हुआ था, लेकिन उसकी रिपोर्ट उन्हें नहीं दी गई. सुबह के करीब 6 बजे पुलिस की 20-50 जीप उनके घर आई थी. उन्हीं में से किसी एक में नूर की लाश थी. पुलिस ने दबाव बनाया कि जल्द से जल्द उसको दफ़नाया जाए.

मेरठ के तारापुरी में आसिफ़ का पोस्ट मॉर्टम तो हुआ, लेकिन इसे बहुत ही जल्दबाज़ी में किया गया. परिजनों का कहना है कि पोस्टमॉर्टम ठीक तरीके से नहीं किया गया और उसमें गोली लगने वाली जानकारी को हटा दिया गया था. आसिफ़ के पोस्टमॉर्टम का बहुत सारा काम परिवारवालों की ग़ैर-मौजूदगी में ही किया गया. जबकि क़ानून कहता है कि पोस्टमॉर्टम के समय परिवार का एक सदस्य निश्चित रूप से मौजूद रहना चाहिए. मोहसिन के मामले में पुलिस ने परिजनों को यह समझान की कोशिश की कि पोस्टमॉर्टम की जरूरत नहीं है.

तथ्य जांच टीम ने यूपी के कुछेक पीड़ित परिवारों से ही मुलाकात की है. इनकी तादाद बहुत ज्यादा है. यह साबित होता है कि उत्तर प्रदेश में पुलिस के साथ-साथ डॉक्टरों ने पुलिस के ख़िलाफ़ आने वाली सबूतों को मिटाने का काम किया है. डॉक्टरों की जिम्मेदारी है कि वे समय पर पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट दें. ऐसा नहीं किया गया. इस रिपोर्ट में पहले ही कहा जा चुका है कि कैसे पुलिस ने चिकित्सीय-क़ानूनी दस्तावेज़ देने से इनकार किया, जिससे सबूत नष्ट किए गए. ऐसा करके उत्तर प्रदेश के डॉक्टरों ने वहां पीड़ितों को उनके न्याय पाने के अधिकार का हनन किया है. इससे परिवार वालों को जो सदमा झेलना पड़ा है उसकी कल्पना नहीं की जा सकती. इस जन-सुनवाई के जूरी सदस्य जस्टिस एपी शाह ने कहा कि यह एक अति गंभीर मामला है और युद्ध के समय भी आपात चिकित्सा से इनकार नहीं किया जा सकता.

Watch:
https://www.youtube.com/watch?v=i467ojktSRQ

परिजनों पर पड़ा प्रभाव

उत्तर प्रदेश में पुलिस और प्रशासन तंत्र ने जिस तरह से हिंसा और सांप्रदायिकता का माहौल खड़ा किया है, उसका घाव लंबे समय तक टीस देता रहेगा. रिपोर्ट के इस अंश में आप देख पाएंगे कि पुलिस की हिंसा से प्रदेश के लोगों के जीवन पर क्या असर पड़ा है.

आजीविका और आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

पुलिस की हिंसा के शिकार अधिकतर लोग युवा वर्ग से हैं. ग़रीब परिवार के ये युवा अपने परिवार की रीढ़ थे. कमाई का एकमात्र सहारा इन्हीं के ऊपर टिका था. मेरठ का जहीर एक कामकाजी युवा था. 20 दिसंबर को पुलिस ने उसे गोली मार दी. जहीर चारा बेचने का काम करता था और उसने हाल ही में दो मंजिला घर बनवाया था. इस घर के लिए लिया गया लोन अभी तक चुकता नहीं किया गया है. अब जहीर की मौत के बाद परिजनों के लिए यह लोन चुकाना असंभव जैसा है.

इस रिपोर्ट में यह पहले ही देख चुके हैं कि कैसे पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट और सबूत के अभाव में जहीर के परिवार को कोई सरकारी मुआवज़ा नहीं मिल सकेगा. इससे जहीर से कई पीड़ितों के परिजनों के लिए एक आर्थिक संकट की स्थिति पैदा होगी.

मेरठ में तथ्य जांच टीम ने पाया कि मोहसिन अपने पीछे अपनी पत्नी, दो बच्चे और विधवा मां को छोड़ गया है. उसका छोटा बेटा 4 महीने का है और फिलहाल निमोनिया से पीड़ित है. मोहसिन के भाई बाहर रहते हैं और वह अपने परिवार की रीढ़ था.

दिनेश ओबरॉय ने जन-सुनवाई में गवाही दी कि मुजफ़्फ़रनगर में तथ्य जांच टीम का हिस्सा बनकर उन्होंने पाया कि पुलिस ने विशेष रूप से "आर्थिक तौर पर संपन्न" मुस्लिम परिवारों को निशाना बनाया है. मुसलमानों के घरों-दुकानों में भारी तोड़फोड़ मचाई गई है. कई परिवारों में पुलिस ने लाखों रुपए लूट लिए.

सच तो यह है कि संपत्ति को भारी नुक़सान पहुंचाए जाने के बाद यूपी सरकार ने हज़ारों पीड़ितों को वसूली का नोटिस थमा दिया है. मुसलमानों के कई सालों की कमाई को पुलिस ने घंटों में तबाह कर दी. अब उनकी भरपाई कौन करेगाय़

मानसिक स्थिति पर प्रभाव

मुस्लिम समुदाय के एक व्यक्ति ने कहा, "प्रशासन का डर है. हम सब मजदूर हैं इधर. सरकार से कहां लड़ेंगे?" एक मृत व्यक्ति की मां को रात भर नींद नहीं आती. उन्हें डर है कि पुलिस घर से उठाकर ले जाएगी. लोगों में इस तरह का भय और हताशा है.

पुलिस की हिंसा और तोड़फोड़ ने लोगों को बुरी तरह से डरा दिया है. यह समझना जरूरी है कि जब राज्य खुद ही दंगाई बन जाए तो लोगों के बीच सुरक्षा की भावना का बचा होना असंभव है. इन सबसे लोगों के भीतर मानसिक और शरीरिक तौर पर प्रताड़न झेलना पड़ रहा है. एक

तथ्य जांच टीम के दौरे में एक मां ने कहा, "पुलिस का नाम सुनकर बच्चे बहुत घबरा जाते हैं और रात को लिपट कर छोटे होकर सोते हैं. बाहर भी नहीं निकले." महिलाएं बताती हैं कि इतना कुछ देखने के बाद ना वे सो पाती हैं ना खाना खा पाती हैं. नौजवानों की मौत के बाद पूरा परिवार आर्थिक और शारीरिक दोनों तौर पर टूट चुका है.

यूपी के मुसलमानों की असुरक्षा की भावना घर कर गई है. इन सभी सबूतों का संज्ञान लेते हुए जन-सुनवाई की जूरी में शामिल मनोचिकित्सक डॉ अनिरुद्ध काला ने कहा कि अगर लोगों की चिंताओं पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया तो यूपी के बहुत सारे मुसलमान पोस्ट ट्रॉमेटिक स्ट्रेस डिसॉर्डर नामक मनोरोग के शिकार हो जाएंगे. तथ्य जांच टीम ने जिन परिवारों का दौरा किया, वहां लोगों के मन में यह डर समा गई है कि पुलिस कभी भी आकर उनके ऊपर हमले कर सकती है और घरों में तोड़फोड़ मचा सकती है.

मेरठ में तथ्य जांच टीम ने पाया कि मुस्लिम समुदाय के लोग पुलिसिया हमले को लेकर लोगों को जागरूक कर रहे हैं. युवा वर्ग के लोग देर रात घरों से बाहर नहीं निकलते कि कहीं पुलिस उन पर हमले कर देगी. हर्ष मंदर ने गवाही दी कि जिन परिवारों से उन्होंने मुलाकात की, उनके बच्चे रातों को सो नहीं पाते और खाकी वर्दी देखकर डर जाते हैं.

संभल जिले में पीड़ितों से बात करके हमने पाया कि लोग सदमे में हैं. वे समझ नहीं पा रहे कि पुलिस ने उनके ऊपर मुक़दमे क्यों लादे हैं. वे समझ रहे हैं कि मुसलमान होने की वजह से उनके साथ ये ज्यादती हो रही है. वे पूछते हैं, "हम कहां जाएं? क्या यह देश हमारा नहीं है?"

वसूली का नोटिस

उत्तर प्रदेश पुलिस ने योगी आदित्यनाथ के "बदला" लेने वाले बयान को गंभीरता से लेते हुए 400 मुसलमानों के पास बिना किसी जांच के ही वसूली का नोटिस भेज दिया है. संभल में 56, फिरोजाबाद में 200, मुजफ़्फरनगर में 46, मेरठ में 134, रामपुर में 28, गोरखपुर में 33 लोगों के पास वसूली का नोटिस भेजा है. हैरत की बात है कि फिरोजाबाद में एक ऐसे शख़्स के नाम से वसूली का नोटिस जारी किया गया है, जिनकी मौत 6 साल पहले ही हो चुकी है. इसी तरह एक 90 साल के बुजुर्ग, जो पिछले कई सालों से बिस्तर पर पड़े हैं, उन्हें भी वसूली का नोटिस भेजा गया है.

25 दिसंबर 2019 को रामपुर के डीएम औंजनेय सिंह ने पत्रकारों से कहा, "हिंसा में शामिल 28 लोगों को कारण बताओ नोटिस भेजा गया है. इसका जवाब नहीं देने पर हिंसा के दौरान हुए संपत्ति के नुक़सान की भरपाई की जाएगी."

लखनऊ में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सार्वजनिक संपत्ति को नुक़सान को पहुंचाने वालों को जमकर कोसा. उन्होंने एक रैली में कहा, "दंगाईयों को खुद से पूछना चाहिए कि क्या वे सही कर रहे हैं. जिस संपत्ति को नुक़सान पहुंचाया गया क्या वे उनके बच्चों के इस्तेमाल में नहीं आता? जख़्मी आम लोग और पुलिसकर्मियों के साथ जो हुआ उसका जिम्मेदार कौन है? प्रधानमंत्री ने कहा कि वो लोगों को याद दिलाना चाहते हैं कि संविधान में हमें अधिकार और कर्तव्य दोनों एक साथ दिया है.

प्रधानमंत्री ने पुलिस की गोली से मरे लोगों और संपत्ति के नुक़सान पर कुछ नहीं कहा. प्रधानमंत्री ने तोड़फोड़ और सीसीटीवी के तमाम सबूतों पर भी कुछ नहीं बोला. इससे यह साफ होता है कि सीएए-एनआरसी के ख़िलाफ़ प्रदर्शन कर रहे लोगों पर अत्याचार करने के लिए सरकार का ऊपर से लेकर नीचे तक का तंत्र लगा हुआ है. यह भी विडंबना है कि जनता को उसका कर्तव्य याद दिलाने वाले प्रधानमंत्री ने प्रदेश की अपनी सरकार, पुलिस और अस्पतालों को कोई कर्तव्य याद नहीं दिलाया.

फिरोजाबाद में तथ्य जांच टीम ने बन्ने खान के परिवार से मुलाकात की. बन्ने खान के नाम से पुलिस ने 1 लाख रुपए का नोटिस भेजा है. बन्ने खान की मौत 6 साल पहले ही हो चुकी है. टीम ने 92 साल के एक बुजुर्ग से मुलाकात की, जो पिछले कई सालों से डिमेंशिया नामक मानसिक बीमारी से ग्रस्त हैं और बिस्तर पर पड़े हैं. पुलिस ने इनके पास भी वसूली का नोटिस भेजा है.

द इंडियन एक्सप्रेस से बातचीत में फिरोजाबाद के कई लोगों ने बताया कि वे मजदूरी का काम करते हैं और हिंसा वाले रोज वे अपने काम पर गए थे. जिन लोगों के यहां नोटिस भेजा गया उनमें से अधिकतर तो अभी जेलों में बंद हैं. यह कहानी यूपी के कई शहरों में एक जैसी है.

उत्तर प्रदेश की तर्ज पर ही कर्नाटक, गुजरात और दिल्ली सरकार भी संपत्ति के नुक़सान की वसूली का नोटिस भेज रही है. यह भविष्य के लिए एक ख़तरनाक ट्रेंड पैदा कर रहा है.

प्राकृतिक न्याय की अवहेलना

जन-सुनवाई के दौरान वृंदा ग्रोवर ने गवाही दी कि सामान्य तौर पर राज्य सरकार की पूरी

मशीनरी धीमी प्रक्रिया से काम करती है, लेकिन वसूली नोटिस भेजने के मामले में पुलिस ने बहुत ही जल्दबाजी दिखाते हुए तत्परता से काम कर रही है. आगे उन्होंने कहा कि वसूली नोटिस भेजते हुए प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत को भी ताक पर रखा गया. राज्य की जिम्मेदारी होती है कि वह साबित करे कि अमुक व्यक्ति ने सार्वजनिक संपत्ति का नुक़सान पहुंचाया है. इसके उलट यूपी में आम जनता के ऊपर यह जिम्मेदारी डाल दी गई है कि वो साबित करे कि उसने ऐसा कोई नुक़सान नहीं पहुंचाया है.

लोगों के पास नोटिस भेजने के पहले कोई जांच नहीं की गई.मुजफ़्फ़रनगर में एक स्थानीय पत्रकार ने तथ्य जांच टीम को बताया कि वहां 78 लाख रुपए की वसूली का नोटिस 72 लोगों के पास भेजा गया है. किसी को नहीं मालूम कि पुलिस ने इन 72 लोगों का नाम किस आधार पर चुना. सरकार का मानना है कि वह वसूली का नोटिस भेजकर लोगों से बदला ले रही है.

अब सरकार वसूली की इन नोटिसों का इस्तेमाल दूसरे तरह से भी कर रही है. जिन लोगों के नाम वसूली का नोटिस जारी हुआ है, उन्हें जेलों से निकलने के लिए जमानत नहीं मिल रही. कहा जा रहा है कि जब तक पूरी रकम की भरपाई नहीं करेंगे तब तक जमानत नहीं मिलेगी. इस बात के पुख़्ता प्रमाण हैं कि पुलिस ने 85 और 94 साल के अशक्त बुजुर्गों को भी नोटिस भेजा है. इन सभी गवाहों और सबूतों को सुनने के बाद जूरी ने अपना फ़ैसला दिया कि, "वसूली का नोटिस भेजने से पहले किसी का भी गुनाह साबित नहीं किया गया. ये पुलिस की एक डरावनी और अवैध रणनीति है."

बदस्तूर जारी है हिंसा का पैटर्न

उत्तर प्रदेश में पुलिस और राज्य प्रायोजित हिंसा 19-20 दिसंबर के बाद आज भी बदस्तूर जारी है. 19 जनवरी 2020 को लखनऊ के घंटाघर पर लगभग 50 महिलाएं सीएए के ख़िलाफ़ विरोध-प्रदर्शन करने आईं. अगले दिन कई महिलाएं इस प्रदर्शन में जुड़ गईं, जिससे यह प्रदर्शन बड़ा होता गया. एक वीडियो में देखा गया कि पुलिसकर्मी ने प्रदर्शनकारियों को हटाने के लिए उनका कम्बल जब्त कर लिया. लखनऊ पुलिस ने यहां 3 मुक़दमे दर्ज किए जिसमें दर्जनों लोगों को "दंगा भड़काने" का आरोप लगाया गया.

कम्बल जब्त करने वाला मामला सामने आने के बाद लखनऊ पुलिस ने एक बेतुका सा बयान दिया है. पुलिस का कहना है, "लखनऊ के घंटाघर के पास लोग बिना अनुमति के प्रदर्शन कर रहे थे. कुछ समूह के लोग, जो प्रदर्शन में शामिल नहीं थे, वे यहां कंबल लेने आ गए थे. हमें वहां भीड़ को तितर-बितर करना था, इसलिए कम्बल को जब्त किया गया. अफ़वाह ना फैलाएं."

इसके साथ-साथ यह भी देखना चाहिए कि यूपी पुलिस सीएए के समर्थन में हो रहे विरोध-प्रदर्शनों को अपना पूरा समर्थन दे रही है. 21 जनवरी को केंद्रीय मंत्री अमित शाह ने लखनऊ में एक रैली को संबोधित किया. भाजपा ने अब तक सीएए के समर्थन में तीन रैली कर ली है. 18 जनवरी को वाराणसी और 19 जनवरी को गोरखपुर में रैली आयोजित हुई थी. इन रैलियों में भापा के नेता बता रहे हैं कि सीएए-एनआरसी के मुद्दे पर विपक्ष आम लोगों को बरगला रहा है और इसका संबंध भारत के किसी व्यक्ति से नहीं है.

पुलिस अभी भी आम लोगों को हिरासत में ले रही है. 3 फरवरी 2020 तक यूपी पुलिस ने पोपुलर फ्रंट ऑफ इंडिया से जुड़े 108 लोगों को हिरासत में लिया है. इन पर 19-20 दिसंबर 2019 को हिंसा भड़काने का आरोप लगाया गया है. ऐसी कार्रवाईयों से पुलिस सामाजिक कार्यकर्ताओं पर विशेष रूप से निशाना साध रही है. जब यूपी पुलिस के ऊपर हिंसा के आरोप लगने लगे तो उसने दिसंबर 2019 में पोपुलर फ्रंट ऑफ इंडिया के ऊपर प्रतिबंध लगाने की मांग सरकार से की थी. इसके बाद जन-सुनवाई के दौरान जिन लोगों ने गवाही दी, उनके ख़िलाफ़ भी पुलिस ने मुक़दमे लाद दिए हैं.

निष्कर्ष

जन-सुनवाई के दौरान तमाम गवाहों को सुनने और रिपोर्टों को देखने के बाद जूरी ने यूपी में पुलिस की कार्रवाई को "घोर चिंताजनक और निराशाजनक" बताया. जूरी ने अपने फ़ैसले में कहा, "यह साबित होता है कि राज्य सरकार के ऊपर से लेकर नीचे तक के पूरे तंत्र ने एक समुदाय विशेष यानी कि मुसलमानों और प्रदर्शनों का नेतृत्व कर रहे सामाजिक कार्यकर्ताओं के ख़िलाफ़ पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर बदले की भावना से हिंसा की." जूरी ने यूपी पुलिस के ख़िलाफ़ गहरी नाराजगी जाहिर की. जूरी का कहना है कि यूपी पुलिस ने ना सिर्फ आम लोगों के साथ हिंसा की, बल्कि बेगुनाह मुसलमानों और कार्यकर्ताओं को झूठे मुक़दमों में फंसाने का भी प्रयास किया. पुलिस ने नाबालिगों और बच्चों तक को हिरासत में लेकर बुरी तरह पिटाई की है. इसके साथ ही स्वास्थ्यकर्मियों को घायलों का ईलाज करने से रोका गया है. जूरी ने यह भी पाया कि कई जिलों में सरकार द्वारा धारा 144 लागू करना भी नागरिकों के अधिकारों का उल्लंघन था.

उत्तर प्रदेश में करीब 19 नौजवानों की मौत पुलिस की गोली लगने से हुई. इन लोगों को नजदीकी अस्पतालों में ईलाज तक की सुविधा नहीं दी गई. जन-सुनवाई के दौरान कई लोगों ने गवाही दी कि अस्पताल प्रबंधन ने आपात-चिकित्सा से इनकार किया और इसके लिए शायद पुलिस और राज्य सरकार के उच्चाधिकारियों की तरफ से दबाव बनाया गया था. जूरी ने पुलिस की हिंसा के शिकार लोगों की चिंता को भी संज्ञान में लिया. जूरी ने पत्रकारों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और वकीलों के ऊपर हो रहे हमले की भी कड़े शब्दों में निंदा की.

जन-सुनवाई के दौरान जूरी ने कहा, "यह साबित होता है कि राज्य सरकार के ऊपर से लेकर नीचे तक के पूरे तंत्र ने एक समुदाय विशेष यानी कि मुसलमानों और प्रदर्शनों का नेतृत्व कर रहे सामाजिक कार्यकर्ताओं के ख़िलाफ़ पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर बदले की भावना से हिंसा की." जूरी के इस फ़ैसले का अपना क़ानूनी महत्व कम हो सकता है पर इसकी नैतिकता काफी सशक्त है. जूरी ने अन्याय झेल रहे लोगों के घाव पर मरहम लगाने की कोशिश की है.

इस विस्तृत रिपोर्ट में जूरी के सभी मतों के पक्ष में सबूत दिए गए हैं. रिपोर्ट में पाया गया कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने अपने ही प्रदेश के नागरिकों खासकर एक समुदाय विशेष के लिए भड़काऊ बयानबाजी की है. राज्य सरकार अपने विरोधियों की आवाज़ को पूरी तरह से दबाना चाहती है इसलिए लोगों के शांतिपूर्ण इकट्ठा होने पर रोक के साथ इंटरनेट तक पर प्रतिबंध लगाया गया है. पुलिस खुद दंगाई बनकर सामने आई है. प्रदर्शन कर रहे लोगों और कई मामलों में तो निर्दोष लोगों पर पुलिस ने जानलेवा हमला किया है. पुलिस ने सांप्रदायिक नारे लगाए हैं. सबसे दुखद तो यह है कि पुलिस ने नाबालिगों और बच्चों तक को बेरहमी से मारा है और हिरासत में बंद किया है. पुलिस ने नागरिकों का शारीरिक और यौन उत्पीड़न भी किया है. स्वास्थ्यकर्मी भी इस अपराध में शामिल रहे हैं. ज़ख़्मी लोगों का ईलाज नहीं किया गया और मृतकों के परिजनों को पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट और अन्य सबूत नहीं दिए गए.

इस रिपोर्ट से यह स्थापित होता है कि उत्तर प्रदेश में मानवता के खिलाफ गंभीर जंग छिड़ी है. मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने पुलिस बल का प्रयोग करते हुए अपने ही प्रदेश के मुसलमानों के ऊपर युद्ध छेड़ दिया है. यह कोई नई बात नहीं है कि सांप्रदायिक दंगों के वक्त अल्पसंख्यकों के ख़िलाफ़ पुलिस बर्बर तरीके से कार्रवाई करती है. लेकिन, उत्तर प्रदेश में यह पैटर्न पहली बार देखने को मिल रहा है कि पुलिस खुद ही दंगाई बन गई है. आज उत्तर प्रदेश में जिस तरह का माहौल पुलिस और सरकार ने बनाया है, वैसा माहौल कश्मीर और पूर्वोत्तर के राज्यों के अलावा भारत के किसी दूसरे हिस्से में नहीं देखा गया था. यही इस सरकार के न्यू इंडिया का ख़तरनाक मॉडल है.